खंड

# 2

# प्राकृतिक संसाधन


इकाई 4
थल एवं जल संसाधन 73

इकाई 5
वन संसाधन 101

इकाई 6
जैव विविधता : मूल्य और सेवाएं 115

इकाई 7
ऊर्जा संसाधन 136


ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## खण्ड 2 प्राकृतिक संसाधन

यह खंड प्राकृतिक संसाधनों के उनके वितरण, महत्व, उपयोग और उनके उपयोग से उत्पन्न समस्याओं पर चर्चा करता है। प्राकृतिक संसाधनों में भूमि, जल, खनिज, पौधे और पशु आदि शामिल हैं। प्रकृति ने हमें ये संसाधन दिए हैं जो सभी जीवन रूपों के अस्तित्व और विकास के लिए आवश्यक हैं। हमारे प्राकृतिक खजाने को बुद्धिमानी और विवेकपूर्ण तरीके से उपयोग करना हमारी प्रमुख जिम्मेदारी है। प्राकृतिक संसाधनों पर हमारी मांग तेजी से बढ़ रही है और यह माना जाता है कि संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग हो रहा है। यह आंशिक रूप से मानव आबादी में जबरदस्त वृद्धि, खपत की दर और आंशिक रूप से हमारे हिस्से पर प्राप्ति की कमी के कारण है कि ये संसाधन सीमित हैं और एक दिन समाप्त हो जाएंगे। इसलिए, स्थायी प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की आवश्यकता है।

**इकाई 4 थल एवं जल संसाधन** – इस इकाई में हम दो महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों अर्थात् भूमि और जल पर चर्चा करेंगे जो सभी जीवन रूपों के अस्तित्व और विकास के लिए आवश्यक हैं। हमारी बढ़ती मांग के बावजूद समझदारी और विवेकपूर्ण तरीके से हमारे प्राकृतिक खजाने का उपयोग करना हमारी प्रमुख जिम्मेदारी है। खेती की सामग्री, चराई या शोषण के लिए भूमि की सतह के गहन और अनियमित उपयोग ने संयंत्र समुदायों और उनकी संरचना के साथ–साथ पुनर्जनन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। इसी तरह, खनन और प्रदूषण के सबसे स्पष्ट और लंबे समय तक चलने वाले प्रभावों में से एक, जल संसाधनों की मात्रात्मक और गुणात्मक गिरावट है। उद्योग जल निकायों में जहरीले कचरे को अनुपयोगी बनाते हैं। प्राकृतिक संसाधनों की मांग उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है, इसलिए हमें उन्हें और अधिक कुशलता से उपयोग करने की आवश्यकता है और वैकल्पिक स्रोतों या उनके विकल्प की भी तलाश करनी चाहिए।

**इकाई 5 वन संसाधन** – यह इकाई एक संसाधन के रूप में वन के आर्थिक, पारिस्थितिक और सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व का वर्णन करेगी। यह वनों की कटाई के विभिन्न कारणों और परिणामों के लिए स्पष्टीकरण भी प्रदान करेगा। अंतिम खंड, अनुभाग 5.6, वन संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन के तरीकों से संबंधित है।

**इकाई 6 जैव विविधताः मूल्य और सेवाएं** – यह इकाई जैव विविधता को परिभाषित करती है और जैव विविधता के विभिन्न स्तरों अर्थात् आनुवंशिक, प्रजातियों और पारिस्थितिक तंत्र विविधता की व्याख्या करती है। यह भारत के विभिन्न जैव–भौगोलिक क्षेत्रों में होने वाली वन्य जीवन प्रजातियों की गणना और विश्लेषण भी करता है। इकाई प्रत्यक्ष बनाम अप्रत्यक्ष उपयोग, निकालने वाले बनाम गैर–निकालने वाले उपयोग और संसाधन बनाम गैर–संसाधन उपयोग के संदर्भ में विविधता का मूल्य भी समझाती है।

**इकाई 7 ऊर्जा संसाधन** – इस इकाई में, हम आर्थिक विकास में ऊर्जा की बहुआयामी भूमिका की समझ के साथ संसाधन के रूप में ऊर्जा की अपनी चर्चा शुरू करते हैं। हम अपने निपटान में ऊर्जा संसाधन आधार और हमारे लिए उपलब्ध विभिन्न ऊर्जा विकल्पों की जांच करेंगे। अंत में, हम अपनी ऊर्जा मांग के संबंध में पृथ्वी की वहन क्षमता का विश्लेषण नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों पर परिवर्तन करने की दृष्टि से करेंगे।

इकाई 4

# थल एवं जल संसाधन

## इकाई की रूपरेखा


4.1 प्रस्तावना

संभावित अध्ययन परिणाम

4.2 नवीकरणीय और अनवीकरणीय संसाधन

4.3 नवीकरणीय जल संसाधन

जल चक्र

जल के प्रकार

सतह और भूजल का अत्यधिक दोहन

जल स्रोतों का निम्नीकरण

बाढ़ और सूखा

जल संसाधनों का संरक्षण और प्रबंधन

4.4 अनवीकरणीय थल संसाधन

मृदा का निर्माण

कृषि एंव अतिचराई के कारण हुए परिवर्तन

भूमि निम्नीकरण

भूमि उपयोग योजना और प्रबंधन

4.5 सारांश

4.6 अंत में कुछ प्रश्न

4.7 उत्तर

4.8 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री


## 4.1 प्रस्तावना

पिछली इकाईयों में आपने पढ़ा कि आपका पर्यावरण किनसे बनता है और किस प्रकार पारितंत्र (ecosystem) मनुष्यों समेत असंख्य जीवन प्रकारों को सहारा देते हैं। आप पर्यावरण के महत्व को भी समझ चुके हैं और ये भी जान चुके हैं कि किस प्रकार ऊर्जा सूर्य से उत्पादकों (वृक्ष, शैवाल इत्यादि) और उसके बाद शाकभक्षियों और फिर विभिन्न उपभोक्ताओं जैसे मांसभक्षियों तक एक से दूसरे रूप में परिवर्तित होकर जाती है। इस इकाई में हम उन संसाधनों अथवा संपदा के विषय में चर्चा करेंगे जो प्रकृति ने हमें दी है क्योंकि ये सभी जीवन प्रकारों की उत्तरजीविता और विकास के लिए अनिवार्य है। ये हमारा प्रमुख सरोकार है कि हम इस प्राकृतिक संपदा को समझदारी से और उचित तरीकें से उपयोग करें। यद्यपि संसाधनों का उपयोग अविवेकी तरीके से हो रहा है। ऐसा कुछ तो मानव जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि के कारण और कुछ हमारे द्वारा ये समझने में कमी के कारण है कि ये संसाधन सीमित है और एक दिन समाप्त हो जाएंगे। भूमि सतह का खेती, चराई अथवा पादप सामग्रियों के दोहन के लिए अत्यधिक और अनियंत्रित उपयोग ने पादप समुदाय और उनके संयोजन तथा पुर्नजनन क्षमता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। जैसे शहरों में खनन और प्रदूषण का सर्वाधिक और दीर्घकालिक प्रभाव बल संसाधनों का मात्रात्मक और गुणात्माक निम्नीकरण है। उद्योगों से जल निकायों में विषाक्त अपशिष्ट मिलते हैं जो उन्हें अनुपयोगी बना देते हैं।

अपने जल और जल संसाधनों को संरक्षित और सुरक्षित रखने का एक अन्य कारण ये है कि इनकी आपूर्त्ति असीमित नहीं है। प्राकृतिक संसाधनों की मांग निरंतर बढ़ रही है, अतः हमें उनको अधिक कुशलता से उपयोग करने की आवश्यकता है और साथ ही उनके वैकल्पिक स्त्रोतों अथवा विकल्पों की तलाश भी करनी चाहिए। ऐसा तभी संभव है जब हम उनकी उपलब्धता और सीमाओं को समझेंगे।

## संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई को पूरा पढ़ने के बाद आप :

- ❖ नवीकरणीय और अनवीकरणीय संसाधनों को परिभाषित कर सकेंगे,
- ❖ हमारी पृथ्वी पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे,
- ❖ ये समझा सकेंगे कि किस प्रकार कृषि और उद्योग में विभिन्न मानव गतिविधियों ने भूमि और जल संसाधनों का निम्नीकरण किया है,
- ❖ मृदा अपरदन और मरूस्थलीकरण की परिघटनाओं को समझा सकेंगे और ये कि किस प्रकार बुद्धिमत्तापूर्ण और सतर्क योजना से विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों जैसे भूमि और जल का दीर्घोपयोगी तरीके से उपयोग किया जा सकता है,
- ❖ ये समझा सकेंगे कि किस प्रकार पर्यावरणीय निम्नीकरण से बाढ़ और सूखे की स्थितियां उत्पन्न होती हैं, और
- ❖ अंतर्राष्ट्रीय तथा अन्तर्राज्यीय जल विवादों/झगड़ों के विषय में जान सकेंगे।

## 4.2 नवीकरणीय और अनवीकरणीय संसाधन

हमारे संसाधन मूलरूप से दो प्रकार के हैं, नवीकरणीय (renewable) और अनवीकरणीय (nonrenewable)। आइए जानते हैं कि इसका क्या अर्थ है। एक संसाधन को किसी भी उपयोगी जानकारी, पदार्थ अथवा सेवा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। व्यापक रूप से हम प्राकृतिक संसाधनों यानी पर्यावरण और भूमि द्वारा प्रदान की जाने वाली वस्तुओं और सेवाओं और मानवजनित संसाधनों यानी शहरों, इमारतों, संस्थानों तथा अन्य कलाकृतियों और मानव संसाधनों जिसमें बुद्धिमत्ता, अनुभव, कौशल और उद्यम सम्मिलित हैं, के बीच अंतर कर सकते हैं।

प्राकृतिक संसाधन दो प्रकार के होते हैं। पृथ्वी के कुछ संसाधन प्राकृतिक गुणन द्वारा समय–समय पर विस्थापित होते रहते हैं जैसे कि वनस्पति। दूसरे शब्दों में, इन संसाधनों का पुर्नजनन होता रहता है और इसलिए ये **नवीकरणीय संसाधन** कहलाते हैं। वन, चारागाह, वन्यजीव तथा जलीय जीवन नवीकरणीय संसाधनों के उदाहरण हैं। जल भी एक नवीकरणीय संसाधन है क्योंकि इसका पुर्नचक्रण हो जाता है। कुछ अन्य संसाधन जैसे खनिज तथा जीवाश्म ईंधन (fossil fuels) भी हैं, जिनका एक बार उपयोग होने पर वे सदा के लिए लुप्त हो जाते हैं। इनको पुर्नजनित नहीं किया जा सकता है। खनिज निक्षेप बहुत धीमी गति से करोड़ो वर्षों में बनते हैं। एक बार निक्षेपित खनिज का उपयोग हो जाने पर उनको पुर्नजनित नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, जीवाश्म ईंधन (पेट्रोल, कोयला) जिनका दहन हो जाता है, को पुर्नजनित नहीं किया जा सकता है। ये **अनवीकरणीय संसाधन** कहलाते हैं। इसी प्रकार, मृदा का निर्माण बहुत धीमी

प्रक्रिया है और उपरिमृदा की परत बनने में हजारों वर्ष लग सकते हैं। अतः ये भी अनवीकरणीय संसाधन है। आइए हम जल और भूमि का नवीकरणीय और अनवीकरणीय संसाधनों के रूप में वैयक्ति रूप से पड़ताल करते हैं।

## 4.3 नवीकरणीय जल संसाधन

जल जीवन के सबसे महत्वपूर्ण घटकों में से एक है। हमारे जल संसाधन सीमित है जबकि प्रकट रूप से जल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। जल की उपयोग योग्य मात्रा की विश्व के बड़े हिस्से में बहुत कमी है।

मानव की उत्तरजीविता सदियों से समाज के भूमि और जल संसाधनों के संबंध पर निर्भर है। यह संबंध तब से विकसित हो रहा है जब से नदी के तटों और घाटियों ने मानव बस्तियों की बसावट को प्रभावित किया है। अनेक प्राचीन सभ्यताएं नदी के तटों पर फली फुली और नदियों की बाढ़ में नष्ट हो गई – कुछ संभवतः दोषपूर्ण जलभर (watershed) नदी घाटी प्रबंधन के कारण समाप्त हो गई। यद्यपि, अंततः मनुष्यों को जल और भूमि का चक्रिय संबंध समझ में आ गया। इस समझ ने अत्यधिक विकसित अभियंत्रिकी तकनीकों के प्रयोग द्वारा टंकियों को बनाने की शुरूआत की।

मीठा पानी मानव जीवन के निर्वहन के लिए सबसे महत्वपूर्ण पदार्थों में से एक है। इसे पंचतत्वों– पृथ्वी, अग्नि, वायु, अंतरिक्ष और जल में से एक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। इसकी सभी जनों द्वारा श्रद्धा और पूजा की जाती थी और सम्मान किया जाता था।

ऐसा इसलिए है क्योंकि पृथ्वी पर पाए जाने वाले जल का महज एक प्रतिशत हम सब के लिए आसानी से उपलब्ध है। इस मात्रा में से, लगभग 73 प्रतिशत कृषि, 20 प्रतिशत उद्योग और शेष घरेलू तथा मनोरंजन आवश्यकताओं जैसे पीने तथा अन्य उपयोगों के लिए प्रयोग किया किया जाता है।

जल संसाधनों का वैश्विक वितरण दर्शाता है कि जल की कुल मात्रा का 3 प्रतिशत से भी कम मीठा जल है। विभिन्न संसाधनों में कुल मीठे जल की उपलब्धता को सारणी 4.1 में दिखाया गया है।

**सारणी 4.1: कोपेन की जलवायु वर्गीकरण की प्रणाली**

| मीठे जल का प्रकार | % मीठा जल | % उपलब्ध |
|---|---|---|
| 1. हिमीकृत | 80.00 | |
| 2. तरल | 20.00 | |
| झीलें | 0.2 | 1.0 |
| मृदा | 0.04 | 0.2 |
| नदियां | 0.02 | 0.1 |
| वायुमंडल | 0.02 | 0.1 |
| जैविक (उपापचयी) | 0.001 | 0.005 |
| भूजल | 19.7 | 8.4 |

सारणी 14.1 से यह स्पष्ट है कि मीठे जल का सिर्फ एक बटे पांचवा भाग तरल रूप में उपलब्ध है। यह सीमित मात्रा पुर्नपूर्ति योग्य है इसलिए, मनुष्य द्वारा आवर्ती उपयोग के

लिए इसपर निर्भर किया जाता है। इस कमी वाले उत्पाद का 90 प्रतिशत से अधिक भूजल के रूप में है, जबकि सिर्फ 1 प्रतिशत ही झीलों और तालों में है। मृदा प्राचल में सिर्फ 0.2 प्रतिशत है, लेकिन इससे दोगुनी मात्रा नदियों अथवा वायुमंडल में है। भारत, कुल वार्षिक वर्षा के संदर्भ में बहुत भाग्यशाली है। यहां 400 mham (दस लाख हैक्टेयर मीटर) औसत वर्षा प्राप्त होती है जिसमें से 185 mham सतह जल के रूप में उपलब्ध है, 50 mham भूजल के रूप में भंडारित है और 165 mham मृदा में भंडारित है।

मीठे जल की कुल मात्रा मनुष्य की वर्तमान और भावी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त से भी अधिक है। लेकिन इसके असमान वितरण, व्यापक मौसमी और वार्षिक उतार–चढ़ावों के कारण जल की कमी विश्व के अनेक भागों में एक गंभीर समस्या है।

अतः हम देख सकते हैं कि विभिन्न उपयोगों जैसे सिंचाई, नौचालन, जल विद्युत उत्पादन तथा घरेलू और औद्योगिक आवश्यकताओं के लिए आवश्यक जल की मात्रा कम है। इसलिए, ये आवश्यक है कि जल संसाधनों का उचित उपयोग किया जाए।

### 4.3.1 जल चक्र

जल पर जल की सतत् रूप से गति होती रहती है और ये अनेक जटिल परस्पर संबंधित चक्र बनाता है (चित्र 4.1) जल के चक्रण में वायुमंडल, सागर, पृथ्वी और समस्त जीव जगत सम्मिलित हैं। जल का परिसंचरण अत्यधिक गतिक और वैश्विक स्तर का है। यद्यपि, सुविधा के लिए इसे विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया गया है:

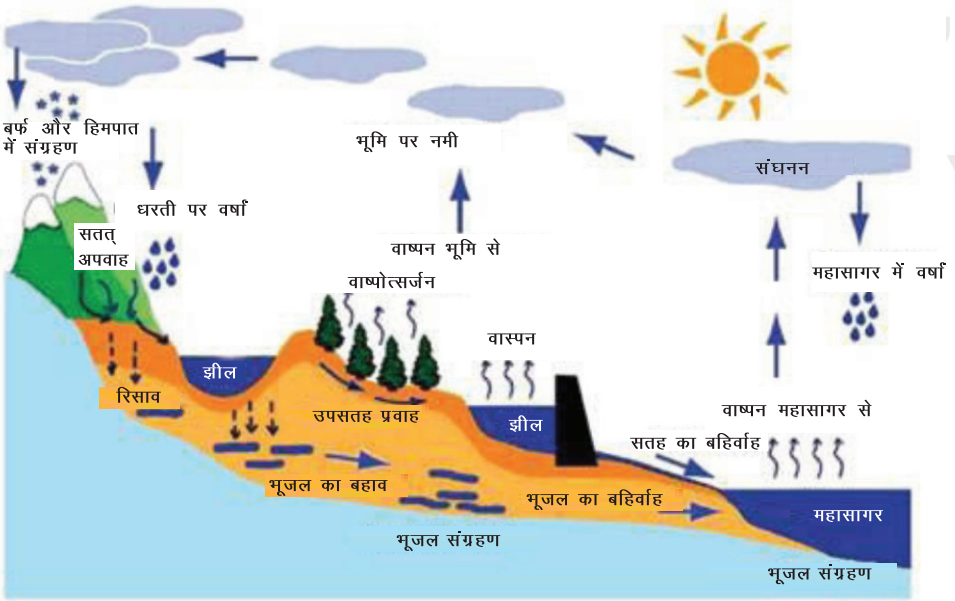


चित्र 4.1 : जल चक्र।

i) **वर्षण** : वर्षण (precipitation) में वे सभी प्रकार सम्मिलित हैं जिनमें वायुमंडलीय आर्द्रता पृथ्वी पर गिरती है : वर्षा, हिम, ओला, हिमी वर्षा और ओस। जल के वाष्पन के कारण वायुमंडल में जो आर्द्रता प्रवेश करती हैं वह जमीन पर गिरने से पहले या तो तरल (वर्षा) अथवा ठोस (हिम, ओलावृष्टि, हिमीवर्षा) में परिवर्तित हो जाती है (चित्र 4.2)। जल वायुमंडल से संघनन, निक्षेपण और वर्षण के द्वारा भूमि और सागरों में वापस आ जाती है। **संघनन** (condensation) को ऐसी प्रक्रिया के रूप में

परिभाषित किया जाता है जिसके द्वारा जल वाष्प प्रावस्था से तरल अवस्था (आस बिंदुकणों के रूप में) में परिवर्तित हो जाता है। **निक्षेपण** (deposition) वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जल सीधे वाष्प से ठोस (हिम कण) प्रावस्था में परिवर्तित हो जाता है। वायुमंडल में जल की नन्ही बूंदों और हिमकणों से जो संघनन और निक्षेपण से बनते हैं, बादल बनाते हैं। पृथ्वी पर जल की मुख्य मात्रा वर्षा से प्राप्त होती है।

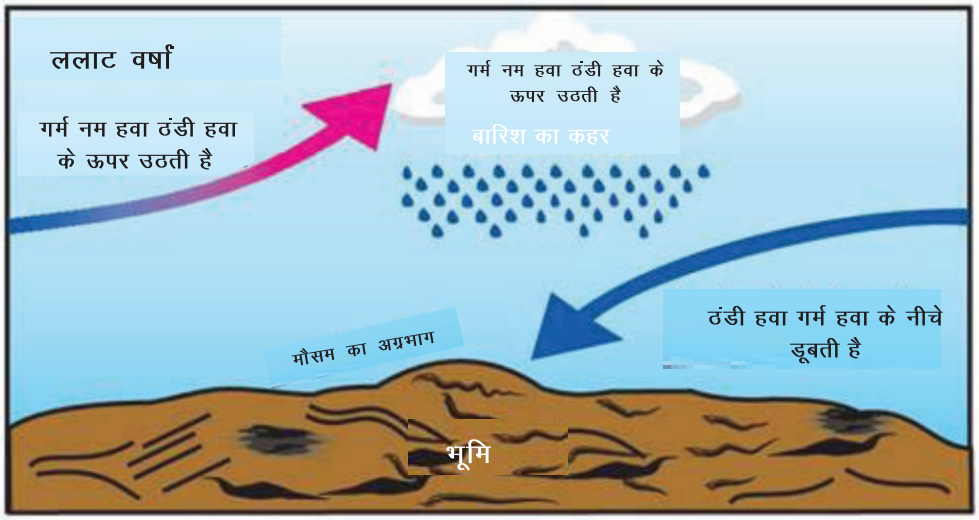


**चित्र 4.2 : किसी दिए गए पार्सल भूमि भाग में आर्द्रता से भरी वायु की सापेक्ष आर्द्रता तापमान के साथ परिवर्ती होती है। यदि वायु ठंडी होती है तो सापेक्ष आर्द्रता बढ़ जाती है। जब सापेक्ष आर्द्रता 100 प्रतिशत से अधिक हो जाती है, तो वर्षण होता है।**

प्रकृति में जलचक्र सूर्य की ऊर्जा द्वारा बना रहता है। सौर ऊर्जा जल का सागर और भूमि से वाष्पित करती है। जलवाष्प वायुमंडल में संघनित होकर बादल बनाती हैं जो पवन धाराओं से लंबी दूरियों तक ले जाए जाते हैं। वर्षा और पिघली बर्फ नदियों में जल की पुर्नपूर्ति करते हैं, जो इसे वापस समुद्र में ले जाती है।

ii) **वाहित जल** (Runoff) : कुछ वर्षा को मृदा द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है और अतिरिक्त जल भूमि की सतह पर प्रवाहित क्षेत्र के प्राकृतिक ढ़ाल से होकर बहता है। वाहित जल झीलों और नदियों के लिए जल का मुख्य स्त्रोत है जो अंततः सागर में चला जाता है। बहता जल मृदा अपरदन और अंतर्निहित चट्टानों के क्षरण के कर्मक की तरह कार्य करता है। बरसाती मौसम में अत्यधिक वाहित जल देश के अनेक भागों में बाढ़ लाता है।

iii) **ऊर्ध्वपातन** (sublimation) : यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा ठोस जल सीधे वाष्प प्रावस्था में तरल प्रावस्था में जाए बिना ही परिवर्तित हो जाता है। जब तापमान हिमीकरण से काफी नीचे रहता है तो ऐसे कालों में बर्फ के पत्रकों का क्रमिक रूप से लुप्त होना ऊर्ध्वपातन का एक उदाहरण है।

iv) **वाष्पन** (Evaporation) : यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा तरल जल परिवेशी तापमान पर वाष्प में परिवर्तित हो जाता है। जल सभी जलीय निकायों से और आर्द्र सतहों से भी वाष्पित होता है। महासागर की सतह से वाष्पन वायुमंडलीय जलवाष्प का सबसे बड़ा स्त्रोत है।

v) **वाष्पोत्सर्जन** (Transpiration) : इसका अर्थ पादपों की पत्तियों से वाष्प के रूप में जल की हानि से है। थल पर, काफी वा पोत्सर्जन होता है। उदाहरण के लिए, सिर्फ वाष्पोत्सर्जन से ही जल की हानि एक एक हैक्टेयर के मक्का के खेत से लगभग 35,000 लीटर ($ 800 गैलन) प्रतिदिन की होती है।

प्रकृति में जल के चक्रण के विषय में पढ़ने के बाद आप पृथ्वी पर पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के जल के विषय में जानना चाहेंगे।

## 4.3.2 जल के प्रकार/रूप

भूमि पर जल तीन रूपों – मीठा जल, खारा जल और समुद्री जल में पाया जाता है।

### मीठा जल

जल, जोकि एक सर्व विलायक है, में अनिवार्य रूप से अनेक विलेय लवण होते हैं। मीठे जल में, लवण की कुल मात्रा 1.5 प्रतिशत से कम रहती है। विभिन्न प्रकार के विलेय लवण जो चट्टानों के क्षरण, मृदा अपरदन और कार्बनिक तत्व के अपक्षय से निर्मुक्त होते हैं, जल में घुल जाते हैं। घुले हुए लवणों का प्लावी जलीय वनस्पतियों और पादपप्लवकों के लिए विशेष महत्व होता है।

### खारा जल

खारे जल में घुले हुए लवणों की मात्रा मीठे जल से अधिक होती है और ये 0.5 से 3.5 प्रतिशत के बीच होती है। ये मध्यवर्ती लवणता विस्तार वाले जलीय निकाय ताजे और समुद्री जलों से भिन्न होते हैं। किसी नदमुख (estuary) में जो नदी के अंत को प्रदर्शित करती है, मीठे जल के समुद्री जल में मिश्रित होने से खारा जल बनता है।

### समुद्री जल

समुद्री जल अत्यधिक लवणीय होता है। समुद्री जल की औसत लवणता लगभग स्थिर रहती है, जो भारानुसार 35 भाग लवण प्रति 1000 भाग जल है और इसे 3.5 प्रतिशत लिखा जाता है। समुद्री जल के औसत लवण संयोजन को सारणी 4.2 में दिया गया है। कुछ लवण की झीलों का लवणता स्तर 35 प्रतिशत तक हो सकता है। ऐसे पर्यावासों में जैविक क्रिया अत्यधिक सीमित होती है।

## 4.3.3 सतह और भूजल का अत्यधिक दोहन

अन्य फसलों की तुलना में चावल उत्पादन जल उपयोग के संदर्भ में कम प्रभावी है। 1kg चावल के उत्पादन के लिए हमें लगभग 5000 लीटर जल की आवश्यकता होती है। गेहूं $4000 m^3/ha$ जल का उपयोग करता है, जबकि चावल लगभग $7650 m^3/ha$ का उपयोग करता है।

जल जो वर्षण के रूप में गिरता है, भूमि से नीचे चट्टानों में चला जाता है और भूजल के रूप में एकत्रित हो जाता है। पत्थरों की वह परत जिससे होकर यह नीचे अंतःस्त्रावित होता है, जलभर (aquifer) कहलाती है और जल को कुंए खोदकर उपयोग में लाया जा सकता है। भूजल मृदा की दो परतों में पाया जा सकता है। वातन का क्षेत्र, जहां मृदा के अन्तराल वायु और जल दोनों से भर जाते हैं। इसके नीचे संतृप्तता का क्षेत्र होता है जहां अन्तराल पूरी तरह से जल से भर जाते हैं। भूजलस्तर चट्टानों/पत्थरों में संतृप्त क्षेत्र और असंतृप्त क्षेत्र के बीच की सीमा होता है और भूजल की मात्रा में वृद्धि अथवा कमी से ये बढ़ता और कम होता है। भूजल हमें विभिन्न कार्यों के लिए

निरंतर जलापूर्ति करता है और प्राकृतिक स्थितियों में इसके सूख जाने की संभावना नहीं होती है। सतह जल में सरिताएं, ताल, झीलें, मानव–निर्मित जलाशय और नहरें तथा मीठे जल के वेटलैंड/आर्द्रभूमि सम्मिलित है। जलचक्र का भाग होने के कारण सतह जल निकाय नवीकरणीय संसाधन माने जाते हैं, यद्यपि ये जलचक्र के अन्य भागों पर निर्भर होते हैं।

**बॉक्स 4.1: भूजल की क्षीणता**

**भूजल की क्षीणता** : भूजल पेयजल का एक प्रमुख स्त्रोत है। इसका आकलित उपयोग लगभग 50 प्रतिशत का है लेकिन इसकी उपलब्धता वर्षा और पुर्नभरण क्षमता पर अधिक निर्भर करती है क्योंकि इसकी मांग निरंतर बढ़ रही है, इससे जल की कमी हो गई है, और जहां कहीं उपलब्ध है, यह प्रदूषण द्वारा प्रभावित है जिससे लाखों जन सुरक्षित पेयजल तक पहुंच से वंचित हो गए हैं। इस प्रकार का संकट प्राकृतिक की अपेक्षा मानवजनित अधिक है। दोहन के स्तर बहुत बढ़ गए हैं और खेती तथा उद्योगों के क्षेत्र में भी कूपों के जल का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है। यह संकट पर्याप्त जलसंरक्षण विधियों की कमी, जल के अप्रभावी उपयोग, कम भूजल पुर्नभरण और मीठे जल के स्त्रोतों की गुणवत्ता में कमी के कारण हो सकता है। जल प्रदूषण की पहचान फ्लोराइड, आर्सेनिक, आयरन, लवण तथा कार्बनिक तत्वों की अधिकता से होती है।

(*स्त्रोत : http://edugreen.teri.res.in/explore/water/water/ground.html*)

कृषि में जल का सर्वाधिक उपयोग होता है। लगभग 70 प्रतिशत उपलब्ध जल प्रतिवर्ष विश्वव्यापी रूप से कृषि उत्पादन में खर्च हो जाता है। एशिया में, यह कुल वार्षिक जल निकासी का 86 प्रतिशत है, जबकि उत्तर और मध्य अमेरिका में 49 प्रतिशत और यूरोप में 38 प्रतिशत है। भारत में हरित क्रांति ने ऊर्जा और संसाधन सघन कृषि के युग का सूत्रपात किया। जल हरित क्रांति में सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण और निकासी के जरिए प्रमुख निवेश था और इसने पिछले 40 वर्षों में गेहूं और चावल के उत्पादन वृद्धि में सर्वाधिक योगदान दिया है। भावी कृषि उत्पादन के निहितार्थ जल प्रभावी उपाय विकसित करना है जो प्रति इकाई जल के निवेश पर अधिक उत्पादकता प्रदान कर सकें। इसके लिए सिंचाई प्रणालियों के प्रभावी प्रचालन, ऐसी प्रौद्योगिकियां जो जल उपभोग को कम कर सकें, जल और मृदा संरक्षण के उचित तरीकों, फसलों के पैटर्न में और फसलों को उगाए जाने के तरीकों में परिवर्तन की आवश्यकता है जिससे जल का अधिक प्रभावी रूप से उपयोग किया जा सके।

## 4.3.4 जल स्त्रोतों का निम्नीकरण

जलस्त्रोतों का निस्नीकरण और उनका संदूषण जिससे वे मानव उपभोग के लिए जल के स्त्रोत के रूप में अनुपयुक्त हो जाए, आज की एक गंभीर समस्या है। हमारे अधिकांश जल निकाय जैसे नदियां, झीलें, महासागर, नदमुख और भूजल निकाय सघन कृषि, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और वनोरोपण के कारण गंभीर प्रदूषण का सामना कर रहे हैं। नदियों और झीलों में मृदा अपरदन के कारण सिल्ट/गाद का जमा होना उनकी जलधारण क्षमता को निरंतर कम करता जाता है जिससे वर्ष दर वर्ष भयंकर बाढ़ आती है। आज हम सुरक्षित पेयजल की कमी की स्थिति का सामना औसत से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों और उन क्षेत्रों में भी कर रहे हैं जहां प्रचुर जल निकाय हैं। वाहित मल

(सीवेज) और औद्योगिक वहिःस्त्रावों का जल निकायों में विसर्जन व सिर्फ जल को प्रदूषित करता है बल्कि अक्सर जलीय पादपों और शैवाल प्रफुल्लनों (algalblooms) की वृद्धि भी बढ़ा देता है, जिससे अंततः जलनिकाय लुप्त हो जाते हैं। यह जल के विभिन्न जीवों जैसे मछलियों का अपक्षय और विनाश भी करता है।

### 4.3.5 बाढ़ और सूखा

बाढ़ सभी प्राकृतिक आपदाओं में सबसे सामान्य हैं। बाढ़ें नियमित रूप से 20 हजार से अधिक जाने लेती हैं और 7.5 करोड़ लोगों को विश्वभर में व्यापक रूप से प्रभावित करती हैं। अकेले बांग्लादेश में बाढ़ों के कारण होने वाली जीवन की हानि की लगभग दो तिहाई होती हैं। भारत में बाढ़ से औसत रूप से विश्वभर में होने वाली मौतों की 20 प्रतिशत (1/5) मौते और 60 करोड़ रूपये की हानि प्रतिवर्ष होती है। जीवन की हानि और संपत्ति की क्षति के अतिरिक्त, लाखों व्यक्ति प्रतिवर्ष दक्षिण एशियाई देशों में बाढ़ों के कारण विस्थापित हो जाते हैं।

बाढ़ जल का वह विसर्जन है जो नदी की नहर क्षमता से अधिक का होता है। बाढ़े विभिन्न कारणों से आती हैं, जिनमें सम्मिलित हैं।

बाढ़ों के प्रतिकूल प्रभावों को कम करना निम्न के द्वारा संभव है :

- उपयुक्त स्थानों पर बांधों और जलाशयों का निर्माण,
- नदियों और नहरों पर तटबंधों को मजबूत करना,
- नदियों, नहरों और जलाशयों की धारण क्षमता को आवर्ती रूप से गाद निकालकर और उन्हें गहरा करके बेहतर बनाना,
- नदी अथवा जलभाग से अन्य नहरों और जलमार्गों में बाढ़ के जल का अपवर्तन/विपथन करना,
- बाढ़ मैदान प्रबंधन तकनीकों को अपनाना,
- तालाबों, जलाशयों, टंकियों को बनाना और जलमार्गों के अवरोधों को दूर करके उन्हें बढ़ाना और निर्माण कार्य से बचना।

अब विज्ञान और प्रौद्योगिकी में उन्नति के कारण समयपूर्व बाढ़ के आने की पूर्वानुमान अथवा भविष्यवाणी करना आसान हो गया है। संपत्ति की क्षति, जीवन की हानि अथवा लोगों के विस्थापन को तभी कम किया जा सकता है यदि संबंधित संस्थाएं अपने क्रियाकलापों को समन्वित करके समय से आपदा को संबोधित करने के लिए कार्य करें।

बाढ़ की भांति ही **'सूखा' (drought)** को अस्वाभाविक रूप से दीर्घीकृत अवधि तक शुष्क मौसम के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें उस क्षेत्र में बहुत कम वर्षा होती है जहां बारिश की सामान्य रूप से उम्मीद की जाती है। सूखा, शुष्क जलवायु से भिन्न है जो सामानयतः उस क्षेत्र से संबंधित होता है जो सामान्यरूप से अथवा मौसमीरूप से शुष्क होता है। सूखा अक्सर सालों तक रहता है। सूखा एक विसर्पी आपदा है क्योंकि ये धीरे–धीरे विकसित होती है और दीर्घकाल तक बना रहती है। सूखा किसी विशेष विवर्तनिक अथवा स्थलाकृतिक स्थान तक सीमित नहीं रहता है और इनके प्रभाव अक्सर बड़े क्षेत्रों और भूभागों तक विस्तारित रहते हैं। सूखे का प्रभाव विकसित की अपेक्षा विकासशील देशों को अधिक गंभीर रूप से प्रभावित करता है। फसल की हानि, भुखमरी और कुपोषण गरीबों के लिए अत्यधिक कठिनाईयां पैदा करते हैं।

### बॉक्स 4.2: केस स्टडी : राजस्थान में सूखा

**सूखा** : राजस्थान, जोकि भारत का सबसे बड़ा राज्य है, जिसका भूमि क्षेत्रफल ऊपर 239 वर्ग किलोमीटर और आकलित जनसंख्या लगभग **5.4 करोड़** की है, **वर्ष 2000 में गंभीर सूखे से ग्रस्त था।** राज्य के कुल 32 जिलों में से 31 जिलों में सूखा था और इनमें से 25 जिले गंभीर रूप से प्रभावित थे। 73.64 प्रतिशत गांव सूखे की गिरफ्त में थे, जिसने लगभग 3.304 करोड़ व्यक्तियों और 3. 997 करोड़ मवेशियों को प्रभावित किया था। सूखे की गंभीरता का पता इस तथ्य से किया जा सकता है **कि 2647 प्रमुख जलाशयों में से सिर्फ 300 ही भरे थे। साथ ही, लगभग 75 से 100 प्रतिशत फसलें जल की कमी के कारण नष्ट हो गई थी।** इन सभी के कारण जीविका की हानि हुई जिससे रोजगार की तलाश में व्यापक स्तर पर प्रवासन हुआ था।

*स्त्रोत : **http://www.un.org.in/UNDMT/states/rajas/dstatus.html***

यद्यपि सामान्यतः जलवायु सूखे का प्रमुख कारण होती है, लेकिन स्थिति को अक्सर आमजन द्वारा जल संसाधनों का उपयोग करने के तरीकों द्वारा और खराब कर दिया जाता है। ईंधन की लकड़ी के लिए पेड़ काटना, कृषि अथवा आवास के लिए जंगलों का सफाया, खनन, खेती के अवैज्ञानिक तरीके और भूजल का अंधाधुंध दोहन सूखे की स्थिति उत्पन्न करता है। ये तर्क दिया जाता है कि विकासशील देशों में गंभीर सूखे की स्थितियां जलवायवीय स्थितियों की अपेक्षा वैश्विक विकास नीतियों का परिणाम अधिक हैं।

सूखे के अनेक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव होते हैं जो सामान्यतः उस क्षेत्र से परे तक विस्तारित रहते हैं जहां वास्तव में जल की कमी होती है। इन्हें निम्न में वर्गीकृत किया जा सकता है :

- आर्थिक–फसल, डेयरी, मवेशी, मछली उत्पादन की हानि
- पर्यावरणीय– पादप और जंतु प्रजातियों को क्षति, मृदा अपरदन
- सामाजिक – भोजन की कमी, स्वास्थ्य की क्षति, जल उपयोगकर्ताओं के बीच विवाद

सूखा संभावित क्षेत्रों में जलाशयों का निर्माण करके, आमजन को जल संरक्षण के विषय में शिक्षित करके, वैज्ञानिक खेती और भूजल संसाधनों का इष्टतम उपयोग करके सावधानियां बरती जा सकती हैं। चूंकि भारत के अनेक भाग सूखा ग्रस्त हैं, सरकारी संस्थाएं फसल नहीं होने की स्थिति में अनाज की पूर्ति के लिए अनाज भंडारण बनाए रखती हैं।

**जल संचयन के उपाय** : सूखे से और उसके कारण होने वाली जल की कमी से लड़ने का एक प्रभावी उपाय वर्षाजल संचयन के तरीकों को अपनाना है। जल संरक्षण अनेक तरीकों से किया जा सकता है (चित्र 4.3)।

- छतों से वाहित जल को एकत्रित करना
- कैचमेन्ट/जलग्रहण क्षेत्र से वाहित जल को एकत्रित करना
- तालाबों और जलाशयों में स्थानीय सरिताओं से बाढ़ के मौसमी जल को एकत्रित करना

- जलभर प्रबंधन के द्वारा जल का संरक्षण करना।

इन तकनीकों से निम्नलिखित कार्य हो सकते हैं :

- पेयजल प्रदान करना
- सिंचाई के लिए जल प्रदान करना
- भूजल पुर्नभरण में वृद्धि
- बाढ़ का पानी के विसर्जन, शहरी बाढ़ और वाहित मल/सीवेज उपचार संयंत्रों के अतिभराव को कम करना,
- तटीय क्षेत्रों में समुद्रीजल के आने को कम करना

**स्थानीय** स्तर पर अनेक जल प्रबंधन कार्यनीतियां आजकल उपयोग में लाई जा रही है जो कभी–कभी जल प्रबंधन के लिए व्यापक स्तर पर केन्द्रीकृत, पूंजी–गहन तरीकों को प्रदान करने वाले बेहतर विकल्प देती है। ये व्यापक पहुंचवाले जल प्रबंधन तरीकों की भी पूरक हो सकती हैं।

देश के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक तरीके जल संचयन की पारंपरिक प्रणालियों में उपयोग किए जा रहे हैं। उदाहरण के लिए, जोहड़ों तालाबों को सतह जल निकायों और कुंडों (भूमिगत् टंकियों) का चलन देश के अनेक भागों में है। उत्तर–पूर्वी पहाड़ियों में जल संरक्षण के लिए बांस से ट्रप्स सिंचाई (drip irrigation) की जाती है (चित्र 4.6)।

ठंडे रेगिस्तानों जैसे हिमाचल प्रदेश में स्पीति में प्राचीन काल से कुल सिंचाई का चलन है। कुल (चित्र 4.7 देखिए) अपसारी नहरें हैं जो ग्लेशियरों/हिमनदों से जल को गांवों तक लाने के लिए बनाई गई हैं। कुल अक्सर लंबी दूरियों तक के होते हैं। कुछ 10 km तक लंबे होते हैं और अवक्षेपी पहाड़ी ढ़लानों पर बहते हैं।

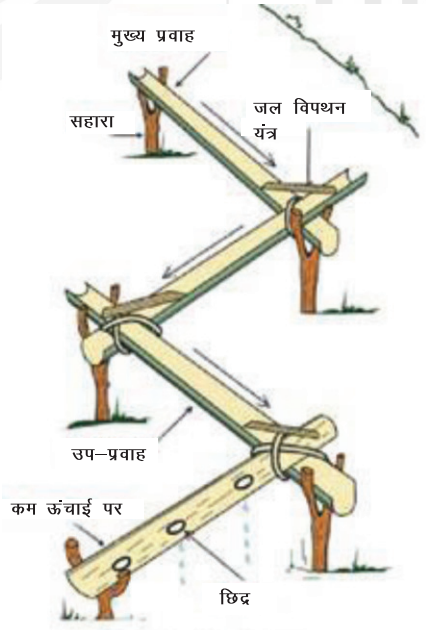


बांस के प्रयोग से टपक सिंचाई

चित्र 4.3 : बांस से ट्रप्स सिंचाई।

## कुल

- कुल जल की नहरे हैं जो अवक्षेपी पहाड़ी इलाकों में पाई जाती हैं। ये नहरें हिमाचल प्रदेश और जम्मू की स्पीति घाटी में हिमनदों से गांवों में जल लेकर जाती है।
- जहां भूभाग दलदली होता है, वहां कुल को पत्थरों से अस्तरित कर दिया जाता है जिससे ये अवरूद्ध न हो सके।
- कुछ कुल 10 km लंबी होती हैं और सदियों से अस्तित्व में हैं।
- कुल का सबसे महत्वपूर्ण भाग इसका हिमनद का सिरा होता है जिसको तैयार किया जाता है। इस भाग को कचरे से मुक्त रखना आवश्यक है।
- गांव में, कुल एक गोल टंकी में खुलता है, जिससे पानी के प्रवाह को नियंत्रित किया जा सकता है।

**चित्र 4.4 : स्पीति क्षेत्र में कुल।**

शहरों और गांवों में भी वर्षाजल संचयन के लिए अनेक तरीके व्यक्तियों और समुदायों द्वारा अपनाए जा रहे हैं। एक ऐसी योजना राष्ट्रपति भवन में भी संचालित है।

राष्ट्रपति भवन में 1 लाख लीटर क्षमता की भूमिगत टंकी का निर्माण निम्न स्तर के उपयोगों के लिए जल भंडारित करने के लिए किया गया है (चित्र 4.8 देखिए)। राष्ट्रपति भवन को घेरे हुए छत के उत्तरी भाग से और खंडजों के वर्षाजल को वहां लाया जाता है।

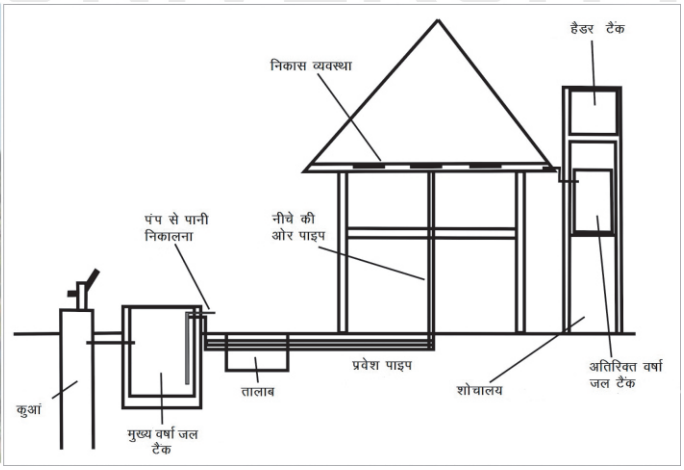


**चित्र 4.5 : राष्ट्रपति भवन में वर्षाजल संचयन।**

1 लाख लीटर की वर्षाजल भंडारण टंकी से परिवाहित जल को भंडारित करने के लिए दो कूपों (dugwell) का प्रयोग किया जाता है। एक अन्य सूखे खुले कूप को छत के दक्षिणी भाग और कर्मचारियों के आवासी क्षेत्र से वर्षाजल से पुर्नभरित किया जाता है। एक गाद निकालने की टंकी का प्रयोग पुर्नभरण कूप में जाने वाले जल से प्रदूषकों को निकालने के लिए किया जाता है।

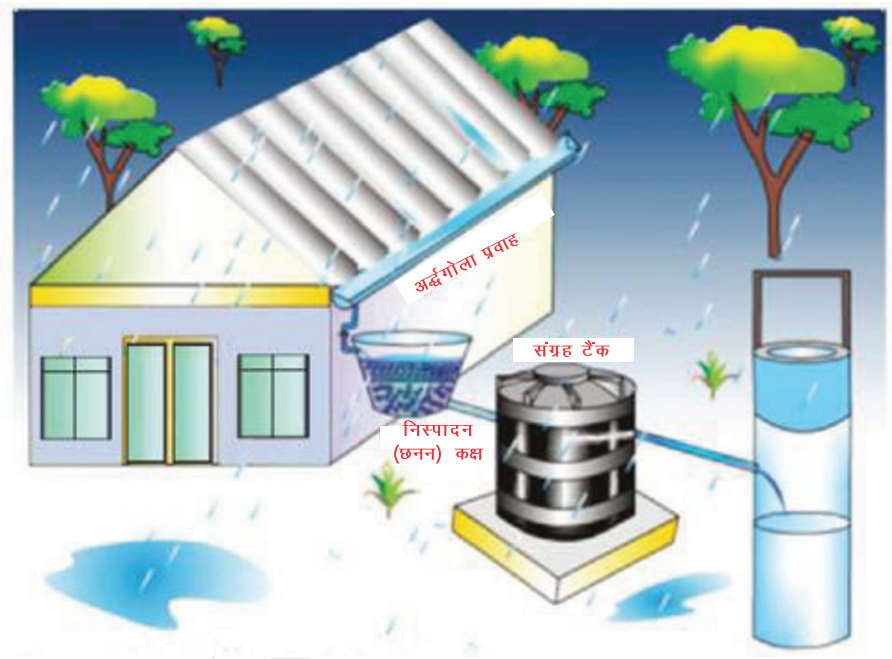


चित्र 4.6 : वर्षाजल संचयन।

**बॉक्स 4.3: हैदराबाद महानगर जलापूर्ति और सिवरेज बोर्ड द्वारा जल संरक्षण के उपाय**

हैदराबाद महानगर जलापूर्ति और सिवरेज बोर्ड (HMWSSB) ने हैदराबाद और सिकन्दराबाद दोनों शहरों में और आस पास के क्षेत्रों से जल संचयन के लिए एक महत्वाकांक्षी योजना आमजनों को भूजल स्तर सुधारने में सक्रिय भागीदारी के जरिए बनाई है। नीरू–मीरू (जल और आग) कार्यक्रम के अंतर्गत जल संचयन उपायों में पुर्नभरण गढ़ढों अथवा लघु उपचार इकाईयों का निर्माण, पौधारोपण और अन्य ऐसे कार्य सम्मिलित हैं जो जल पुर्नभरण और हरियाली को बेहतर बनाएंगे जिससे अन्ततः भूजल स्तर बढ़ेगा। विभिन्न योजनाकार जैसे पूर्व नौकरीपेशा लोग, अवकाश प्राप्त अधिकारी, महिला समूह और गैर सरकारी संगठनों को जल संचयन संरचनाओं की तकनीकों और अन्य जनों को उसके लिए प्रेरित करने के लिए जागरूक किया गया था। प्रशिक्षित समूहों ने फिर समुदायों में जाकर आमजन को वर्षाजल संचयन के महत्व और उसके लाभों के विषय में बताकर प्रेरित किया कार्यनीति के एक भाग के रूप में, बोर्ड ने हाल ही में पूर्व–सेवाकर्मियों को सुग्राही बनाकर जल सैनिक तैयार किए हैं। इसने विद्यार्थी समुदाय को व्यापक रूप से सम्मिलित करने का भी प्रस्ताव दिया है जिससे विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा अन्य संस्थानों द्वारा भूजल स्तर सुधारने के लिए योगदान दिया जा सके।

**स्त्रोत : *http://www.hyderabadwatr.gov.in/RWH_Note.html***

## 4.3.6 जल संसाधनों का संरक्षण और प्रबंधन

जल निरंतर एक कमी वाला उत्पाद बनता जा रहा है। इसकी कमी हम सभी के लिए खतरा है–जो हमारी आजीविका और कभी–कभी हमारे जीवन के लिए भी खतरा हो सकती है। करोड़ो जनों के लिए मीठे पानी की कमी को अपर्याप्त मात्रा के रूप में ही नहीं बल्कि खराब गुणवता के जल के रूप में भी परिभाषित किया जाता है जैसा कि 2001 में संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष/युनाइटेड नेशन्स पोपुलेशन फंड (UNFPA) द्वारा

रिपोर्ट किया गया है, अगले 25 वर्षों में, विश्व की एक तिहाई जनसंख्या जल की गंभीर कमी को झेलेगी। अभी भी, एक अरब से अधिक लोगों की सुरक्षित पेयजल तक पहुंच नहीं है और 3 अरब जनों (पृथ्वी की जनसंख्या के आधे) की मूलभूत सीवेज प्रणालियों तक पहुंच नहीं है। विकासशील देशों में उत्पन्न होने वाले कुल सीवेज का 90 प्रतिशत से अधिक थल और जल में अनुपचारित वापस लौट जाता है। जब तक जल संसाधनों का उचित प्रबंधन नहीं होगा हम विरोधाभासी स्थितियों जैसे औसत से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भी प्रदूषण के कारण पेयजल की कमी को झेलते रहेंगे।

जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ती है और आर्थिक विकास सघन होता है, जल संसाधनों के **पुर्नउत्पादन, नियंत्रण, आवंटन और उपयोग** के लिए दीर्घकालिक नीतिगत् निर्णय लिए जाने चाहिए। भविष्य में, सुरक्षित पेयजल और सफाई के साथ ही औद्योगिक और कृषि कार्यों के बीच जल के लिए विरोधी मांगे बढ़ेंगी।

जल संसाधनों के प्रबंधन का अर्थ है जल के भंडार अथवा स्त्रोत के जीवन को खतरे में डाले बिना विभिन्न उपयोगों के लिए अच्छी गुणवत्ता के जल की पर्याप्त आपूर्ति प्रदान करने के कार्यक्रम से है। दूसरे शब्दों में, ये देखने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए कि (i) सभी प्रकार के उपयोगों के लिए उचित गुणवत्ता का जल उपलब्ध हो (ii) इस बहुमूल्य संसाधन का दुरूपयोग अथवा बर्बादी न हो।

जल प्रबंधन में भूजल के भंडारों का पुर्नभरण और अधिकता वाले क्षेत्र से कमी वाले क्षेत्र में आपूर्ति को प्रदान करना सम्मिलित हैं।

भूजल का पुर्नभरण जल प्रबंधन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। पर्वतों और पहाड़ियों पर, जलभर वनस्पतियों से ढ़के रहते हैं। जलभर की घासफूस से ढ़की मृदा वर्षाजल के अंतःभरण को संभव बनाती है, जो फिर जलभर में चला जाता है।

शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में बाढ़ का पानी, प्रयुक्त जल अथवा घरेलू नालियों को गढ़ढ़ों, खन्दकों अथवा किसी पोखर में भरा जा सकता है, जहां ये भूमिगत् रूप से निष्पादित हो जाता है। बाढ़ के पानी को जलभरों में गहरे गर्तों की श्रृंखला द्वारा डाला जा सकता है अथवा इसे पोखरों के संजाल द्वारा खेतों में फैलाया जा सकता है।

सामान्य और बाढ़ के पानी के भी अतिरिक्त प्रवाह को जल की कमी वाले क्षेत्रों में भेजा जा सकता है। इससे न सिर्फ बाढ़ के पानी से होने वाली क्षति के खतरे को दूर किया जा सकता है बल्कि कमी वाले क्षेत्रों को भी लाभ हो सकता है।

घरेलू और नगरपालिका के अपशिष्ट जल के उचित उपचार द्वारा आप अनेक औद्योगिक और कृषि कार्यों के लिए उपयुक्त आपूर्ति प्राप्त कर सकते हैं। अपशिष्ट जल के उपचार में प्रदूषकों, कीटाणुओं और विषाक्त तत्वों को निकालना सम्मिलित है, जो कि आप पहले ही पिछले अनुभाग में पढ़ चुके हैं।

### समुद्री जल का विलवणीकरण

सौर ऊर्जा के प्रयोग द्वारा समुद्री जल को आसवित किया जा सकता है, अतः अच्छी गुणवत्ता का मीठा पानी प्राप्त हो सकता है। समुद्री जल के विलवणीकरण की यह विधि हमारे देश में गुजरात में भावनगर (चित्र 4.4) और राजस्थान में चुरू में उपयोग की जा रही है।

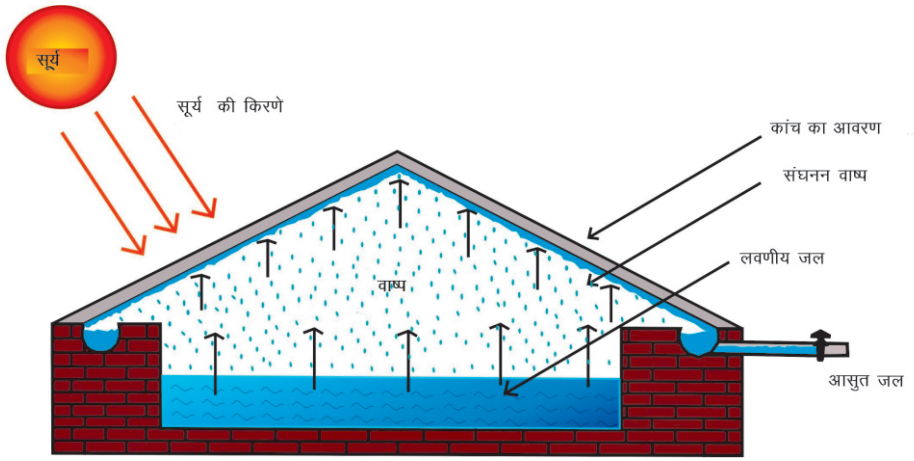


**चित्र 4.7 :सौर ऊर्जा के प्रयोग द्वारा समुद्री जल का विलवणीकरण अत्यधिक उपयोग को कम करना।**

आवश्यकता से अधिक जल का उपयोग इस बहुमूल्य और कमी वाले संसाधन का अक्षम्य दुरूपयोग है। हमारे देश में, बहते/रिसते नलों और खराब नल कार्य के कारण बहुत सा जल व्यर्थ हो जाता है। अत्यधिक सिंचाई पर भी नियंत्रण लगाने की आवश्यकता है।

## अपशिष्ट जल

घरेलू और नगरपालिका अपशिष्ट जल कार्बनिक पोषकों से समृद्ध होता है। यदि इस प्रकार के जल को रोग पैदा करने वाले रोगाणुओं और विषैले तत्वों से मुक्त कर दिया जाए, तो इसका उपयोग खेतों बगीचों और अन्य वनस्पतियों की सिंचाई के लिए किया जा सकता है (चित्र 4.4)।

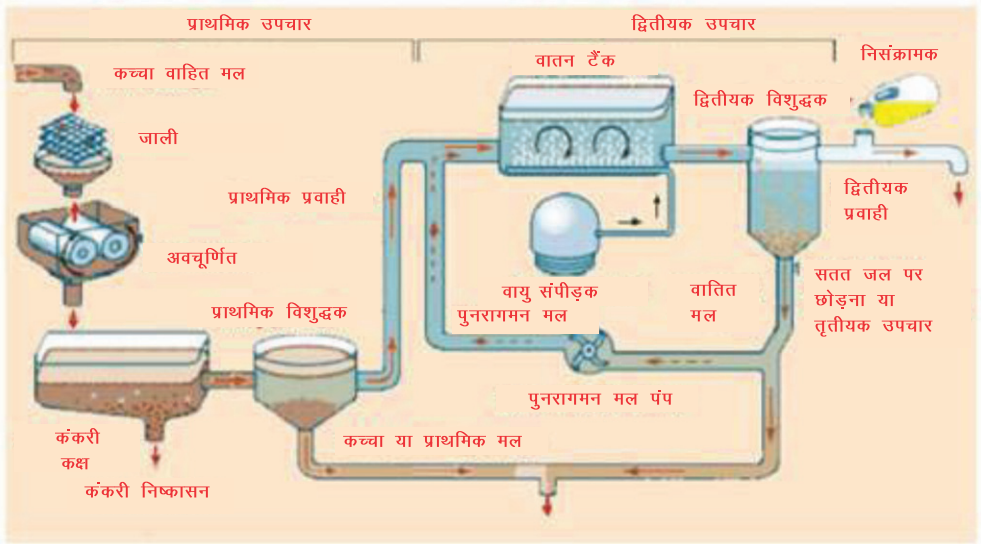


**चित्र 4.8 : घरेलू और नगरपालिका अपशिष्ट जल का उपचार।**

रोगाणुओं और विषाक्त तत्वों को निकालने के लिए अपशिष्ट जल अथवा वाहित मल (सीवेज)। वाहित मल को टंकी अथवा तालाब में अनेक दिनों के लिए उपचारित किया जाता है। ऐसा करने से भारी कण स्वयं तली में बैठ जाते हैं जबकि अधिक बारीक कणों को फिटकरी और कॉस्टिक सोडा डालकर तली में एकत्रित किया जाता है। स्वच्छ तरल को फिर निस्यंदकों (filters) या बालू अथवा मिट्टी से गुजारा जाता है और अंत में उसमें वायु प्रवाहित की जाती है। ये उपचार न सिर्फ कार्बन डाईऑक्साइड और हाइड्रोजन सल्फाइड को निकाल देता है जो सामान्यतः अपशिष्ट जल में घुली रहती है, बल्कि

निस्यंदित जल में ऑक्सीजन भी मिला देता है, जिससे शोधन में सहायता मिलती है। जल का क्लोरीन की उचित मात्रा से उपचार हानिकारक रोगाणुओं को मार देता है और जल को उपयोग योग्य बना देता है।

शैवालों अथवा जलकुंभी को उगाने से, जो कि एक वन्य पादप है जो नदियों और तालों में प्लावी पिंडों में आती है, दोहरा कार्य करती है। ये जल से प्रदूषकों जैसे फॉस्फेटों और नाइट्रेटों को साफ कर देती है जो इन पादपों के लिए पोषक का काम करते हैं, और इन पादपों का बायोगैस बनाने के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है।

## बोध प्रश्न 1

रिक्त स्थानों को भरिए :

i) ..... मानव जीवन के निर्वहन के लिए सबसे प्रमुख पदार्थों में से एक है।

ii) ..... पर जल की गति सतत् होती है।

iii) जल जो कि एक ..... है, में अनिवार्य रूप से अनेक घुलनशील ..... होते हैं।

iv) कृषि जल का सबसे बड़ा ..... है।

v) .....जल का वह विसर्जन है जो ..... की नहर क्षमता से अधिक होता है।

vi) कृष्णा .....का निर्णय 1973 में हुआ था।

vii) जल ..... के पारंपरिक तंत्र में ..... विधियों का प्रयोग किया जाता है।

## 4.4 अनवीकरणीय थल संसाधन

नवीकरणीय संसाधनों जैसे जल और वनों के विषय में पढ़ने के बाद आप जानना चाहेंगे कि अनवीकरणीय संसाधन जैसे भूमि, खनिज महासागरीय संसाधन क्या है। इन संसाधनों को न तो पुर्नउत्पादित किया जा सकता है और न ही विस्तारित किया जा सकता है।

### भूमि संसाधन

भूमि हमारे लिए एक मौलिक संसाधन है। जैसा कि आपने पिछले अनुभाग में पढ़ा है, यह, वास्तव में वह आधार है जिसपर संपूर्ण परिस्थितिक तंत्र टिका है और यह सभी थलीय पादपों और जंतुओं के लिए जीवनस्थल (पर्यावरण) है। भूमि की जीवन और मनुष्यों तथा जंतुओं के विभिन्न क्रियाकलापों को सहारा देने की क्षमता जैविक उत्पादकता एवं मृदा और चट्टानों दोनों की भर वहन करने की क्षमता पर निर्भर करती है।

भूमि जनसंख्या में वृद्धि के कारण अत्यधिक दबाव में है। हमारे थल पिंड जिन पर 1901 में 23.8 करोड़ जन रहते थे, अब वहां 120 करोड़ से भी अधिक व्यक्ति रहते हैं। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई अथवा वनोरोपण के परिणामस्वरूप भू संसाधनों के कुप्रबंधन से मृदा और भूदृश्यों की गुणवत्ता को काफी क्षति हुई है।

## मृदा संसाधन

मृदा, जो भूमि की सबसे ऊपर की परत बनाती है, सभी संसाधनों में सबसे बहुमूल्य है, क्योंकि ये समूचे जीवनतंत्र को सहारा देती है, वनस्पतियों के रूप में भोजन और चारा प्रदान करती है और जीवन के लिए अनिवार्य जल का भंडारण करती है। इसमें बालू, सिल्ट/गाद और मृत्तिका के साथ वायु और आर्द्रता मिश्रित होती है। इसमें समृद्ध कार्बनिक और खनिज पोषक पाए जाते हैं। मृदा का प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान में भिन्न होता है। जो मृदाएं कार्बनिक तत्वों से समृद्ध होती है, वो उर्वर होती है। उर्वरता मृदा की जल और ऑक्सीजन को धारण करने की क्षमता पर भी निर्भर करती है। भारतीय उपमहाद्वीप में निम्नलिखित प्रमुख प्रकार की मृदाएं पाई जाती हैं

चित्र 4.9 : भारत में पाई जाने वाली मृदाओं के प्रकार

1. गहरी लाल मृदा पठारों पर और पूर्वी बिहार, मध्यप्रदेश और आन्ध्रप्रदेश के निचली भूमि क्षेत्रों में पाई जाती है जहां वर्षा 100-300 cm/ वर्ष और तापमान 22$^0$C से ऊपर रहता है। ऐसी मृदा में वर्षा वन और घास के मैदान उगते हैं और ये आलू, केला, अन्ननास तथा रबड़ के उत्पादन के लिए अच्छी होती है।

2. पश्चिमी और मध्य भारत के दक्कन और मालवा के पठारों पर पाई जाने वाली मृदा पर मृत्तिका का आवरण होता है और ये मिश्रित घास के मैदानों, दोनों को सहारा देता है और गन्ने, मूंगफली, सोयाबीन, कपास और चावल की खेती के लिए उपयुक्त है।

3. पश्चिमी भारत के मरूस्थली क्षेत्रों की मृदा में कार्बनिकतत्वों की कमी होती है और ये सामान्यतः कम उर्वरता की मानी जाती है। यद्यपि, यदि जल प्रदान किया जाए तो इसे उर्वर बनाया जा सकता है।

4. एक अन्य प्रकार की मृदा हिंद–गंगा के मैदानों में बंगाल, उड़ीसा, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल और गुजरात के डेल्टा (नदीमुख) क्षेत्रों का भाग बनाती है। इस मृदा की पहचान दोमट गठन शुष्क संयोजन और भिन्न स्थानों पर मोटाई में भिन्नता से होती है। ये मृदा अत्यधिक उत्पादक होती है और सभी प्रकार की फसलों को इसमें उगाया जा सकता है।

5. वह मृदा जो गंगा, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी के डेल्टा में निचले भागों की आर्द्रभूमि अथवा दलदली भूमि और केरल में नदी घाटियों का भाग बनाती है, में समृद्ध कार्बनिक तत्व जैसे अपघटित खेत की खाद (गोबर) और पादप सामग्री (काष्ठ पटि) होते हैं और वह अत्यधिक उर्वर होती है।

6. पर्वतीय हिमालयी क्षेत्र में पाई जाने वाली मृदा जो धूसर से हल्के पीले–भूरे रंग की होती है, की उर्वरता कम होती है और बांस तथा शंकुधारी वृक्षों जैसे चीड़ और देवदार इसमें उगते हैं।

## 4.4.1 मृदा का निर्माण

मृदा के निर्माण में जो प्रक्रियाएं सम्मिलित होती हैं उनके विषय में निम्नलिखित शीर्षकों में पढ़ा जा सकता है :

### चट्टानों का क्षरण

मृदा के निर्माण में सम्मिलित प्रक्रिया एवं मंद, क्रमिक और सतत् है। वे सभी प्राकृतिक प्रक्रियाएं जिनके द्वारा जनक शैलो/चट्टानों का अपघटन होता है सामूहिक रूप से 'क्षरण' कहलाती है, और इनमें भौतिक, रासायनिक और जैविक कर्मक सम्मिलित हैं।

### भौतिक क्षरण

चट्टानों पर कार्य करने वाले यांत्रिक बल भौतिक क्षरण करते हैं। तापमान में उतार–चढ़ाव से चट्टान की सतह का विस्तार और संकुचन होता है, जिससे दरारें और संधे बनती हैं। ठंडे मौसम में, पत्थरों की दरारों में उपस्थित जल जम जाता है और बर्फ के बनने से इसका विस्तार हो जाता है। विस्तार के बल से चट्टान टूट जाती है। टूटी चट्टान के अंश ढलानों से लुढ़कते हुए नीचे आते हैं और पुनः छोटे टुकड़ों में टूट जाते हैं। ओलावृष्टि, वर्षा और तेजी से बहती नदियां भौतिक क्षरण के प्रमुख कर्मक हैं। विशेषरूप से जब ये बालू कणों का लाते हैं जो घर्षण के कारण चट्टान की सतह का अपघर्षण करती है। विध्यांचल पर्वत के वनों में यह सामान्यरूप से देखा जाता है कि वृक्षों की जड़ें अक्सर पत्थरों की दरारों को बेध देती हैं और समय के साथ, जड़ों की अरीय वृद्धि से चट्टानें विघटित हो जाती हैं।

### रासायनिक क्षरण

चट्टाने विघटित होते समय रासायनिक परिवर्तनों से भी गुजर सकती हैं। जल चट्टानी पदार्थों के एक या अधिक घटकों के घुलने से अथवा उनके साथ अभिक्रिया करके रासायनिक परिवर्तन करने का भी एक प्रमुख कर्मक है। घुले हुए पदार्थों की उपस्थिति

और गर्म तापमान रासायनिक क्षरण को बढ़ावा देते हैं। रासायनिक क्षरण की एक अन्य बहुत महत्वपूर्ण प्रक्रिया जलअपघटन की है जिसमें जल $H^+$ और OH आयनों में विघटित हो जाता है (विशेषरूप से कार्बनडाईऑक्साइड और कार्बनिक अम्लों की उपस्थिति में)जो सिलिकेटों जैसे ऑर्थोक्लेज पर क्रिया करके सिलिकेट मृत्तिका बनाते हैं। ऑक्सीकरण और अपघटन की अभिक्रियाएं तथा कार्बनीकरण रासायनिक क्षरण के अन्य महत्वपूर्ण साधन हैं।

### खनिजीकरण और ह्यूमसीकरण

भौतिक क्षरण के फलस्वरूप, चट्टाने छोटे कणों में टूट जाती हैं। लेकिन ये वास्तविक मृदा नहीं होती है, और पादप अकेले इस विघटित चट्टानी पदार्थ में भली प्रकार नहीं डग सकते हैं। यद्यपि क्षरण से निर्मित सामग्री में आगे परिवर्तन होते हैं, जिनके विषय में आप इस अनुभाग में पढ़ेंगे। आपने संभवतः देखा होगा कि क्षरण के काल में अधिकतर भौतिक और रासायनिक कारक सम्मिलित होते हैं। मृदा के आगे विकास के लिए, यानी खनिजीकरण और ह्यूमसीकरण के लिए, मुख्यरूप से जैविक कर्मक सम्मिलित होते हैं।

मृदा निर्माण की आरंभिक अवस्थाओं में मृदा में कार्बनिक पदार्थ बहुत अधिक नहीं होता है; क्योंकि वनस्पतियां और मृदा जंतुजात बहुत विकसित नहीं होते हैं। ऐसी मृदाओं में शैवाल, लाइकेन, मॉस और अन्य छोटे प्रकार के पादप उगते हैं और अपनी मृत्यु तथा अपक्षय से कार्बनिक पदार्थ प्रदान करते हैं। समय के साथ, विभिन्न प्रकार के पादप, जंतु और सूक्ष्मजीव ऐसी मृदाओं में निवह बना लेते हैं। ये भी मृदा में अपशिष्ट और मृत अवशेषों द्वारा कार्बनिक तत्व प्रदान करते हैं। ये कार्बनिक डेवरिस (कचरा) फिर अपेक्षाकृत सरल रूपों में विघटित हो जाता है। ये विघटन की प्रक्रिया जिसे अपघटन भी कहते हैं, विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवों जैसे जीवाणुओं और कवकों के द्वारा होती है। ये कार्बनिक पदार्थों का विभिन्न यौगिकों जैसे पोलीसैकेराइड, प्रोटीन, वसा, लिग्निन, मोम, रेजिन और उनके व्युत्पन्नों में विघटित कर देते हैं। इन यौगिकों को आगे सरल उत्पादों जैसे कार्बन डाईऑक्साइड, जल और खनिजों में विखंडित कर दिया जाता है। ये बाद वाली प्रक्रिया खनिजीकरण कहलाती है। अवशेषी, अपूर्णरूप से विघटित कार्बनिक तत्व जो खनिजीकरण के बाद बचता है **ह्यूमस** कहलाता है और इसके बनने की प्रक्रिया ह्यूमसीकरण कहलाती है। ह्यूमस एक अक्रिस्टलीय, कोलाइडी और गहरे रंग का पदार्थ है जो अधिकांश मृदा सूक्ष्मजीवों के लिए ऊर्जा और पोषकों का स्त्रोत होता है। ह्यूमस महत्वपूर्ण है क्योंकि ये मृदा को एक श्लथ गठन देता है जिससे बेहतर वातन सुनिश्चित हो सके। कोलाइडी प्रकृति का होने के कारण, इसमें जल और पोषकों को ग्रहण और धारण करने की अत्यधिक क्षमता होती है। ह्यूमस मृदा की उर्वरता को अत्यधिक बढ़ा देता है।

## 4.4.2 कृषि एवं अतिचराई के कारण हुए परिवर्तन

मनुष्य द्वारा उसकी कृषि– पशुचारी क्रियाओं द्वारा होने वाले पर्यावरणीय परिवर्तनों को आसानी के लिए दो प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है : (a) पारंपरिक खेती के द्वारा हुए परिवर्तन; (b) आधुनिक कृषि के कारण हुए परिवर्तन। पारंपरिक कृषि की विशेषताओं में भूमि का विरूपण, वनोरोपण के साथ ही मृदा संरचना की हानि, मृदा अपरदन और मृदा पोषकों की कमी। अति चराई (overgrazing) भी अधिकतम पशुधन उत्पादन के लिए भूमि संसाधनों के दोहन का सहउत्पाद है। जबकि आधुनिक कृषि में भी

पर्यावरण पर पारंपरिक कृषि के विदारी प्रभाव जारी हैं। इसमें सिर्फ आधुनिक कृषि के तरीकों के कारण पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव भी सम्मिलित है। उदाहरण के लिए, अत्यधिक सिंचाई से लवणीकरण और जलप्लावन दोनों समस्याएं होती हैं जिससे भूजलस्तर के बढ़ने के साथ ही भूजल संसाधनों का न्यूनीकरण होता है। इसी प्रकार, रासायनिक उर्वरकों को मिलाने से मृदा में सूक्ष्मपोषकों की कमी हो जाती है और जलनिकायों का सुपोषण (eutrophication) हो जाता है और बच्चों में नाइट्रोसोएमीनिया हो जाता है। पादप सुरक्षा रसायनों का उपयोग खाद्य उत्पादों को विषाक्त कर देता है और कभी–कभी अलक्ष्यित हितैषी जीवों को भी मार देता है। इसी प्रकार, उच्च उत्पादक किस्मों का उपयोग कृषि को बाजार–अभिमुख बना देता है, एक लखेती को बढ़ावा देता है जिससे महामारियां फैला रही हैं और अनुवंशिक विविधता में कमी आती है।

## 4.4.3 भूमि निम्नीकरण

भूमि निम्नीकरण (land degradation) भूमि की गुणवत्ता में कमी की प्रक्रिया है (चित्र 4. 11)। सामान्य रूप से, इसे मृदा की उत्पादन करने की क्षमता में गुणात्मक, मात्रात्मक, सेवा और वस्तुओं में कमी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। मानवीय क्रियाएं जिनके कारण भूमि निम्नीकरण होता है, उनमें, **वनोरोपण, खेती, नदियों पर बांध बनाना, औद्योगिकीकरण, खनन, विकास कार्य जैसे मानव बस्तियों, सड़कों, राजमार्गों, और परिवहन तथा संचार के संजालों का निर्माण – इत्यादि सम्मिलित है।**

**चित्र 4.10 : कृषि कुप्रबंधन और वन अपरूपण के कारण भूमिनिम्नीकरण**

प्राकृतिक आपदाएं जैसे सूखा, बाढ़, भूस्खलन, तथा भूकंप भी भूमि निम्नीकरण करते हैं। भूमि उपयोग में सदियों से मानव समुदायों में हुए विकास से परिवर्तन हुआ है। यद्यपि, औद्योगिकीकरण से पहले के युग में, प्रकृति की पुनरूद्धारी क्षमता (restorative capacity) इन परिवर्तनों को संभाल लेती थी। वर्तमान समय में, भूमि के अति दोहन और मृदा निम्नीकरण चिंताजनक अनुपात में बढ़ गया है। सारणी 4.3 में विश्व में प्रमुख भूमि निम्नीकरण की मात्रा और कारणों को दिया गया है।

सारणी 4.3 : विश्व में भूमि निम्नीकरण की मात्रा और उसके कारण

| निम्नीकरण की मात्रा | भूमि निम्नीकरण के कारण |
|---|---|
| 58 करोड़ हैक्टेयर | **वनोरोपण**: खेती और शहरी उपयोग के लिए वनों के विशाल प्रारक्षित क्षेत्रों को व्यापक स्तर पर पेड़ काटकर साफ कर दिया गया। 20 करोड़ हैक्टेयर से भी अधिक के उष्णकटिबंधी वनों को 1975–1990 के काल में मुख्यरूप से खाद्य उत्पादन के लिए नष्ट कर दिया गया। |
| 68 करोड़ हैक्टेयर | **अतिचराई** : विश्व के लगभग 20 प्रतिशत चारागाह और मैदानी क्षेत्र क्षतिग्रस्त हो गए हैं। वर्तमान में अफ्रीका और एशिया में सबसे गंभीर हानि हुई है। |
| 13.7 करोड़ हैक्टेयर | **जलावन का उपभोग** : लगभग 17.30 करोड़ घन मीटर जलावन की लकड़ी को वनों और बागानों से प्रतिवर्ष काटा जाता है। |
| 55 करोड़ हैक्टेयर | **कृषि कुप्रबंधन** : जल अपरदन के कारण मृदा की हानि का आकलन 2500 करोड़ टन वार्षिक का है। मृदा लवणीकरण, जलप्लावन, रसायनिक निम्नीकरण और मरूस्थलीकरण विश्व स्तर पर लगभग 4 करोड़ हैक्टेयर भूमि को प्रभावित करता है। |
| 1.95 करोड़ हैक्टेयर | **औद्योगिकीकरण और शहरीकरण** : शहरी वृद्धि, सड़क निर्माण, खनन, और उद्योग विभिन्न क्षेत्रों में भूमि निम्नीकरण के प्रमुख कारक है। बहुमूल्य कृषि भूमि अक्सर नष्ट हो जाती है। |

(*स्त्रोतः* एफएओ : 1996)

## भूमि और मृदा

पर्यावरणीय निम्नीकरण से न सिर्फ भूजल स्तरों में कमी आई है बल्कि इससे भूमि निम्नीकरण, मृदा अपरदन और मरूस्थलीकरण भी हुआ है। सारणी 4.4 में भूमि उपयोग के विश्वव्यापी आंकड़े दिए गए हैं। देखिए कि सिर्फ लगभग 10 प्रतिशत विश्व का भूक्षेत्र वायवीय (फसलों के लिए जुताई के योग्य) अथवा स्थायी रूप से फसलों जैसे फलों के बाग, बागानों अथवा अंगूरलताओं के अंतर्गत है। शेष क्षेत्र खेती के लिए बहुत गहरा, बहुत ठंडा, बहुत गर्म, बहुत आर्द्र अथवा बहुत शुष्क है।

सारणी 4.4 : विश्व भूमि उपयोग, 1972 और 1987

| भूमि उपयोग | विश्व क्षेत्रफल (1000 हैक्टेयर) | |
|---|---|---|
| | 1972 | 1987 |
| कुल क्षेत्रफल | 13,389,001 | 13,389,055 |
| थल क्षेत्रफल | 13,073,849 | 13,076,536 |
| वायवीय और स्थायी फसलें | 1,413,990 | 1,473,699 |
| वायवीय | 1,322,797 | 1,373,200 |

| | | |
|---|---|---|
| स्थायी फसलें | 91,193 | 100,499 |
| स्थायी चारागाह | 3,226,013 | 3,214,352 |
| वन और जंगल | 4,195,500 | 4,068,536 |
| अन्य भूमि | 4,238,344 | 4,519,949 |

*स्रोत : खाद्य एवं कृषि संगठन, उत्पादन वार्षिकी/ईयरबुक 1989, वोल्यूम 42, स्टेटिस्टिक्स सीजीज 88, रोम*

भारत में, 30 से 50 प्रतिशत के बीच निजी और सार्वजनिक भूमि का आकलन पारिस्थितिकीय रूप से भिन्न स्तरों तक निम्नीकृत के रूप में किया गया है और इसे सामान्यतः वेस्टलैन्ड' (बंजरभूमि) कहा जाता है, यानी ऐसी भूमि जो पारिस्थितिकीय निम्नीकरण, अति दोहन अथवा स्पष्ट प्रबंधन तंत्र की अनुपस्थिति के कारण अपनी क्षमतानुसार जीव मात्रा का उत्पादन नहीं कर रही है।

वेस्टलैन्ड (बंजरभूमि) विकास में अनेकों मृदा और जल प्रबंधन तरीकों को अपनाना उपयुक्त पादप प्रजातियों को उगाना, उनका संरक्षण करना और हितों को साझा करना सम्मिलित हैं।

वर्तमान में निम्नलिखित कार्यक्रम वेस्टलैन्ड (बंजरभूमि) विकास के लिए राष्ट्रीय प्रयास के भाग के रूप में क्रियान्वित किए जा रहे हैं;

- समेकित वेस्टलैन्ड (बंजरभूमि) विकास परियोजना (IWDP) योजनाएं
- प्रोद्यौगिकी विकास विस्तार और प्रशिक्षण योजना
- गैर सरकारी संगठन (NGOs)/स्वयंसेवी संस्था समर्थन (सहायक अनुदान) योजना
- निवेश प्रोत्साहन योजनाएं (IPS)
- बंजरभूमि/वेस्टलैन्ड विकास कार्यबल (WDTF)

वेस्टलैन्ड/बंजरभूमि विकास प्रोत्साहन संस्था (SPWD) ने अपनी एक प्रमुख गतिविधि के रूप में राजस्थान में चारागाह विकास का काम लिया है। चरागाह गांवों में मवेशियों की चराई के लिए आवंटित सार्वजनिक भूमि होती है। शुष्क भूमि क्षेत्रों में जैसे राजस्थान में सार्वजनिक भूमि की भूमिका मवेशी जनसंख्या के रखरखाव के लिए महत्वपूर्ण है। छोटे किसान चारागाहों पर निर्भर करते हें क्योंकि उनकी निजी भूमि में चारे की उपलब्धता कम होती है, विशेषरूप से उन महीनों में जब बिल्कुल भी चारा उपलब्ध नहीं होती है। अतः चरागाहों का विकास महत्वपूर्ण हो जाता है। निम्नलिखित अनुभव सरकारी संस्थाओं द्वारा समर्थित स्वैच्छिक प्रयास के जरिए वेस्टलैन्ड/बंजरभूमि के विकास की सफलता को प्रदर्शित करते हैं।

**बॉक्स 4.4: केस स्टडी : प्रयत्न समिति**

प्रयत्न समिति उदयपुर जिला, राजस्थान के गिरवा ब्लॉक के गुडलीनम्बोरा क्षेत्र के गांवों को वनभूमि और पंचायत भूमि के पुनरूद्धार में सम्मिलित एक गैर सरकारी संगठन (NGO) है। चारागाह संरक्षण का इनका कार्य सार्वजनिक भूमि पर मवेशी रोधी खाइयों/पत्थर की दीवारों के निर्माण से आरंभ हुआ था। उपयुक्त मृदा और जल संरक्षण उपाय तथा पौधारोपण के साथ–साथ बीजों (घास और वृक्ष) का

छिद्ररोपण किया गया था। इन चारागाहों में उत्पन्न घास का बाजार मूल्य चार सालों में 32.5 लाख रूपये का हो गया था। चारा उपलब्ध कराने के अतिरिक्त इन प्रयासों से स्थानीय प्रजातियों का पुनरूत्पादन हो गया और मृदा अपरदन का स्तर भी बहुत कम हो गया। इसके विषय में अधिक जानकारी निम्न वेबसाइट से प्राप्त की जा सकती है ।

**स्त्रोतः http:/www.humanscapeindia.net/humanscape/new/june02/thecostof.html.**

### बॉक्स 4.5: केस स्टडी :हनुमान वन विकास समिति

वेस्टलैन्ड (बंजरभूमि) विकास प्रोत्साहन संस्था उदयपुर जिले के टोंक गांव में 1994 से हनुमान वन विकास समिति के साथ कार्य कर रही है। स्थानीय निवासियों द्वारा चारागाह की भूमि में सेलखड़ी (soapstone) के खनन के कारण, ये बुरी तरह से निम्नीकृत हो गया था। इसके अतिरिक्त, भूमि के बड़े भाग का कुछ प्रभावीजनों द्वारा अतिक्रमण कर लिया गया था। ग्रामीण समुदाय के साथ जागरूकता फैलाने, अतिक्रमण हटाने और खनन को रोकने के लिए बैठकें की गई। हनुमान वन विकास समिति द्वारा गठित स्व–सहायता समूहों ने सामुदायिक कार्य को सुगम बनाने में प्रमुख भूमिका निभाई। इस कार्य के प्रबंधन के लिए एक चारागाह प्रबंधन समिति का गठन किया गया था। बाउन्ड्री वाला/सीमा दीवार, खाई, गढ़ढे खोदने, नाली रोध (gully plug)/रोकबांध, वृक्षारोपण, घास और वृक्षों के बीजों के छिद्ररोपण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की गई थी। इन कार्यों के द्वारा सृजित रोजगार लगभग 4,500 मानव दिवस का था। इसकी तुलना में, इतनी ही अवधि तक सेलखड़ी के खनन से 2000 मानव दिवस 1 वर्ष का रोजगार सृजन होता था। चारागाह से घास का उत्पादन 6 से बढ़कर 44 टन हो गया था। प्रति परिवार घास की उपलब्धता 155 Kg थी जबकि प्रति जंतु उपलब्धता वर्ष 2000–2001 के काल में 27Kg की थी। पचास हैक्टेयर भूमि के विकास के लिए 3.77 लाख रूपये का निवेश किया गया था। अतः, प्रति हैक्टेयर औसत लागत स्थानीय योगदान के साथ 7,540 रूपये की थी। घास की मौजूदा मूल्य दर से इसके वास्तविक मूल्य का आकलन 1.93 लाख रूपये का था।

इस प्रयास के विषय में अधिक जानकारी निम्न वेबसाइट से ली जा सकती है। http:/www.humanscapeindia.net/humanscape/new/june02/thecostof.html

मृदा वास्तव में वह सामग्री है जिस पर हम जीते हैं। ये वह सामग्री है जो हम भी निर्माण कार्य करते हैं, अपशिष्ट उपचारित करते हैं उसको सहारा देती है और हमारे जल का शोधन भी करती है। किसी भी कार्य के लिए मृदा का उपयोग उसे परिवर्तित कर देता है। इनमें से कुछ परिवर्तन अच्छे होते हैं और कुछ अच्छे नहीं होते हैं। आज किसानों के समक्ष सबसे गंभीर चुनौतियों में से मृदा अपरदन, मृदा लवणता, मृदा प्रदूषण और मृदा उर्वरता को बनाए रखना है।

मृदा अपरदन वह प्रक्रिया है जिसमें मृदा की ऊपरी परतें हट जाती हैं और पवन अथवा जल के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जायी जाती है। इस प्रक्रिया में खनिज कण, कार्बनिक तत्व और पोषक मृदा से निकल जाते हैं जिससे उसकी मोटाई और जल धारण क्षमता कम हो जाती है। अपरदित मृदा फिर सरिताओं और जलाशयों में एक प्रदूषक बन जाती है। नई मृदा बनने में लगने वाला समय इतना अधिक होता है कि मानव दृष्टिकोण से मृदा अपरदन द्वारा लुप्त मृदा सदा के लिए लुप्त हो जाती है। अनेक

तरीके जैसे बांध बनाना, घास पात से ढंकना (mulching) और मृदा की आर्द्रता का संरक्षण को व्यापक स्तर पर मृदा अपरदन रोकने के लिए अपनाया जाना चाहिए।

उर्वर मृदा प्राप्त करने और बनाए रखने का एक तरीका हरा खाद तृण अथवा ऐसी खाद के रूप में कार्बनिक पदार्थों का उपयोग करना है जिसका पहले ही उच्चस्तर पर किण्वन हो चुका हो। यह मृदा की संजकता को बेहतर बनाता है, जलधारण क्षमता को बढ़ाता है और स्थिर सम्मुचयी गठन को बढ़ावा देता है।

शुष्क और उप–शुष्क क्षेत्रों में अत्यधिक अथवा बहुत कम सिंचाई से घुलनशील लवणों में वृद्धि हो जाती है, जिससे मृदा **लवणीय** अथवा **क्षारीय** हो जाती है और ये पादप वृद्धि के लिए प्रतिकूल होती है। जब जल मृदा से वाष्पित हो जाता है तो लवण जैसे कि क्लोराइड, सल्फेट और Na, Ca तथा Mg के बाइकार्बोनेट इसमें संचित हो जाते हैं। क्षारीय मृदा का सबसे प्रभावी उपचार 'जिप्सम' का उपयोग करना है। लवणीय मृदाओं से सोडियम को निक्षालित करने में सहायता के लिए अच्छा निकासी तंत्र भी प्रदान किया जाना चाहिए। गंभीर मृदा लवणता वाले क्षेत्रों में सर्वाधिक लवण–सह–प्रजातियां उगाई जा सकती हैं।

### 4.4.4 भूमि उपयोग योजना और प्रबंधन

भूमि एक समाप्त हो जाने वाला संसाधन है और ये जलवायु परिवर्तन तथा भौतिक प्रक्रमों के लिए अत्यधिक संवेदनशील होती है। भूमि का उपयोग उसकी उपयुक्तता और क्षमता के अनुसार किया जाना चाहिए। जैसा कि आपने पिछले अनुभागों में पढ़ा है, भूमि की उपयुक्तता और क्षमता का मूल्यांकन उसकी भार वहन करने की क्षमता और उर्वरता द्वारा किया जाता है।

चूंकि बढ़ती जनसंख्या के लिए भोजन के लिए और खेती के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता है, अतः उर्वर कृषि भूमि का गैर–कृषि कार्यों जैसे सड़कों और इमारतों के निर्माण के लिए अतिक्रमण कम से कम होना चाहिए। उद्योगों के विकास, बांधों तथा जलाशयों के निर्माण और खनन कार्यों के लिए स्थान का चयन करने में अत्यधिक सावधानी बरती जानी चाहिए जिससे उस क्षेत्र में रहने वाले जनों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति तथा पर्यावरण का नुकसान न हो।

पहाड़ी क्षेत्रों को जहां तक संभव हो सके वनाच्छादित रखना चाहिए क्योंकि वन ईंधन, चारे और इमारती लकड़ी के संसाधन का कार्य करते हैं और पशुपालन के लिए स्थान प्रदान करते हैं (चित्र 4.12)। इसके अतिरिक्त वन भूजल को बढ़ाने में सहायक होते हैं, क्योंकि ये मुक्त सतह वाहजल के प्रवाह में बाधा पहुंचाते हैं जिससे जल भूमि द्वारा अवशोषित हो जाता है और बाढ़ से बचाव होता है।

चित्र 4.11 : पहाड़ी क्षेत्र में आदर्श भूमि उपयोग।

## मृदा प्रबंधन

जैसा कि हमने पहले कहा है, मृदा एक बहुमूल्य संसाधन है जिसके बनने में करोड़ो वर्ष लगते हैं और इसलिए मृदा का उचित प्रबंधन बेहद आवश्यक है। मृदा का प्रबंधन दो तरीकों से होता है यानी (a) मृदा अपरदन को कम करना या रोकना, और (b) मृदा की उत्पादकता को पुनः प्राप्त करना।

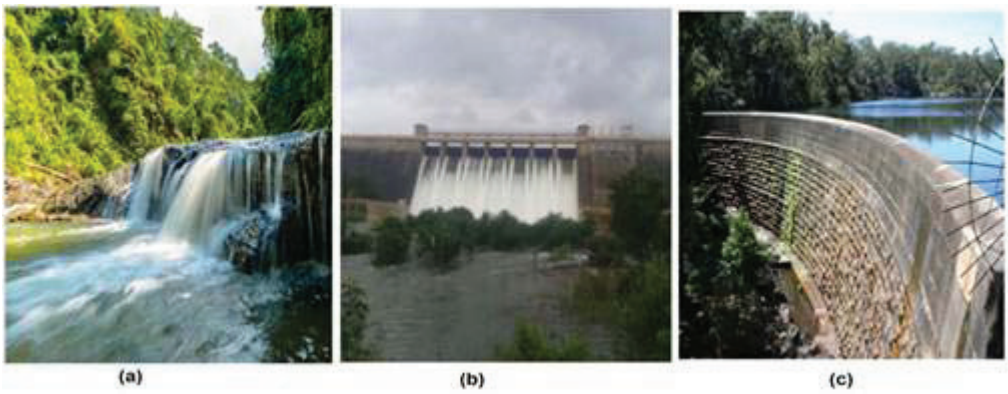


**चित्र 4.12 : a) जल के अनियंत्रित प्रवाह की रोकथाम के लिए निकासी प्रणाली; b) और c) बहते जल के प्रवाह को रोकने के लिए रोक बांध।**

## मृदा अपरदन का नियंत्रण

मृदा अपरदन को रोकने का सबसे महत्वपूर्ण तरीका घासों, झाड़ियों और वृक्षों को उगाना है अर्थात् ऐसे निकासी तंत्र का निर्माण जो मुक्त, अनियंत्रित जल प्रवाह को रोक सके (चित्र 4.13)। जल के प्रवाह से पतली नहरें या नालियां बन जाती है और उनसे गहरी संकरी घाटियों का विकास होता है जिससे दर्रे (बंगघाटियां) बन जाते हैं। प्रसिद्ध चंबल के दर्रे (चित्र 4.14) गहन मृदा अपरदन के फलस्वरूप बने हैं और ये प्रक्रिया अब तक जारी है। इसे रोक बांधों की श्रृंखला का निर्माण करके नियंत्रित किया जा सकता है जो बहते पानी के प्रवाह और नालियों के चौड़ा होने को रोकता है (चित्र 4.13b और c )। महाराष्ट्र, केरल, आंध्रप्रदेश और उड़ीसा के तटों पर पत्थर की चौड़ी दीवार का निर्माण, समुद्री लहरों और धाराओं से अपरदन को नियंत्रित करने में बहुत प्रभावी सिद्ध हुआ है। मरूस्थलों और बालुई तटों में पवन के थपेड़ों से बालू की गति को पवन के साथ वृक्षों और झाड़ियों के अवरोधक लगाकर रोका जा सकता है (चित्र 4.15)। पर्वतीय और पहाड़ी क्षेत्रों में, स्व–प्रवर्धनी वृक्षों और झाड़ियों की कलम और शाखाओं की रोपाई से न सिर्फ ढाल को मजबूती मिलती है बल्कि किसानों को जलाने की लकड़ी और चारा भी मिलता है।

**चित्र 4.13 : चम्बल के दर्रे।**

चित्र 4.15 : वृक्षों और झाड़ियों के अवरोधक लगाकर बालू के थपेड़ों की गति का नियंत्रण संवेदनशील ढ़लानों पर वनस्पतियों का आच्छद प्रदान किया जाता है। आरंभ में बीजों को रस्सी के जाल से ढक दिया जाता है जिनके किले मजबूती से भूमि में गढ़े रहते हैं (जैसा कि चित्र 4.16 में दिखाया गया है)। जल बांधने से अपरदन रूकता है, मृदा सामग्री एकसाथ रहती है और पोषकों में वृद्धि होती है। घास की त्वरित वृद्धि मृदा को स्थिरीकृत कर देती है।

**चित्र 4.14 : पेड़ों और झाड़ियों के अवरोधों को खड़ा करके बालू के झोकों की गति को रोकना।**

### मृदा बीमारी (रूग्ण) का उपचार

विश्राम के बगैर अति उपयोग के कारण मृदा में वांछित पोषकों की कमी हो जाती है और अपनी उर्वरता खो देती है। सब्जियों के चक्रण, जैसे मटर और फली से पोषकों की कमी को दूर करने में सहायता मिलती है। फलीदार फसलें जैसे मटर मृदा में नाइट्रोजन की पूर्ति करती हैं और इस प्रकार उसकी बंधन क्षमता और उत्पादकता को बढ़ाती हैं। फसलों की जड़ें और प्ररोह तथा उनके बचे भागों को खेत में कुछ समय के लिए छोड़ दिया जाता है जिससे मृदा को अपरदन से बचाया जा सके।

**चित्र 4.15 : वनस्पति आच्छादन का वृक्षारोंपण और झांड़-जंगल क्वायर ढ़लानों के पहाड़ों को काटता है।**

ये देखा गया है कि अत्यधिक सिंचाई से मृदा की पूर्ण संतृप्त अथवा जल प्लावन हो जाता है, जिससे अंततः उसकी उत्पादकता आंशिक अथवा पूर्णरूप से लुप्त हो जाती है। कुछ क्षेत्रों में अत्यधिक सिंचाई के फलस्वरूप मृदा की लवणता और क्षारीयता बढ़ जाती है, जो उसे 'रूग्न' बना देती है। इस प्रकार की मृदा रूग्णता को सबसे पहले तो नहरों, जलाशयों, टंकियों और तालाबों के सभी रिसाव के बिंदुओं को बंद करके और जल की सिर्फ वांछित मात्रा का प्रयोग करके नियंत्रित किया जा सकता है।

## बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए और अपने उत्तरों की जांच इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

i) ..... की सबसे ऊपरी परत बनाती है।

ii) चट्टानों पर क्रिया करने वाले यांत्रिक बल भौतिक..... करते हैं।

iii) ..... अधिकतम ..... उत्पादन के लिए भूमि संसाधनों के दोहन का सह–उत्पाद है।

iv) भूमि ..... का अर्थ भूमि की गुणवत्ता में कमी आने की प्रक्रिया से है।

v) ..... , ..... में मवेशियों को चराने के लिए आवंटित सार्वजनिक भूमि है।

vi) भूमि का उपयोग उसकी ..... और ..... के अनुसार करना चाहिए।

vii) अत्यधिक सिंचाई से पूर्ण ..... अथवा ..... का जलप्लावन होता है।

## 4.5 सारांश

इस इकाई में हमने प्राकृतिक संसाधनों भूमि और जल और उनके प्रबंधन और संरक्षण के सिद्धांतों को जानने का प्रयास किया है।

- जल एक नवीकरणीय संसाधन है जबकि भूमि अनवीकरणीय संसाधन है।
- भौतिक संसाधनों का निम्नीकरण जैसे भूमि और जल का मुख्य रूप से मनुष्य की कृषि, उद्योग और शहरीकरण के क्षेत्रों में अतिदोहन के कारण हुआ है।
- कृषि में संरक्षण भूमि उपयोग पैटर्न में परिवर्तन, सिंचाई के जल के संरक्षण, पीड़कनाशियों और उर्वरकों के उपयोग को कम करने और नवाचारी पर्यावरणीय रूप से अनुकूल कृषि तकनीकों के क्रियान्वयन के द्वारा प्रभावी हो सकता है।

## 4.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. नवीकरणीय और अनवीकरणीय संसाधन क्या है। इसको उदाहरण सहित समझाइए।
2. जल संरक्षण के विभिन्न उपाय के बारे में बताइए।
3. भूमि प्रबंधन के आवश्यक तत्वों का वर्णन कीजिए।

## 4.7 उत्तर

### बोध प्रश्न

**बोध प्रश्न 1**

(i) मीठा जल (ii) पृथ्वी (iii) विलायक, लवण (iv) उपभोक्ता (v) बाढ़, नदी (vi) ट्रिब्यूनल (vii) अनेक, संचयन

**बोध प्रश्न 2**

(i) मृदा, भूमि (ii) क्षरण (iii) अतिचराई, पशुधन (iv) निम्नीकरण (v) चारागाह, गांव (vi)उपयुक्तता, क्षमता (vii) क्षमता, मृदा

### अंत में कुछ प्रश्न

1. इसके उत्तर के लिए भाग 4.2 में देखिए।
2. उपभाग 4.2.7 में देखिए।
3. उपभाग 4.3.5 में देखिए।

## 4.8 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री

1. Bharucha, E. (2005) *Textbook of Environmental Studies for Undergraduate Courses,* Hyderabad: Universities Press (India) Private Limited.
2. Botkin, D. B. & Keler, E. A. 8th Ed, (2011) *Environmental Science, Earth as a Living Planet*, New Delhi: Wiley India Pvt. Ltd.
3. Kaushik, A. 2nd Ed. (2004) *Environmental Studies*, New Delhi: New Age International (P) Limited.
4. Rajagopalan, R. 3rd Ed. (2015) *Environmental Studies*, New Delhi: Oxford University Press.
5. Wright, R. T. (2008) *Environmental Science: Towards a Sustainable Future* New Delhi: PHL Learning Private Ltd.

**Acknowledgement**

1. Fig. 4.4: Kuls in the Spiti area.

   (Source: <https://image.slidesharecdn.com/ traditionalwaterharvestinginindia1-130531120014-phpapp01/95 /traditional-water-harvesting-in-india-part-1-12-638.jpg?cb=1370002112>;

   Source: http://www.rainwaterharvesting.org/methods/traditional /kul2.jpg)

2. Fig. 4.9: Type of soils found in the India.

   (Source:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/b/be/ Major_soil_types_in_India.jpg)

3. Fig. 4.10 Land degradation due to agricultural mismanagement and deforestation Source:https://en.wikipedia.org/wiki/Land_degradation#/media/ File:Karst_following_phosphate_mining_on_Nauru.jpg

4. Fig. 4.11: An ideal land use in the hill region.

   (Source: https://upload.wikimedia. org/wikipedia/commons/thumb/7/78/ 080110_zell_mosel.JPG/1200px-080110_zell_mosel.JPG)

5. Fig. 4.12: (a) Drainage system for preventing uncontrolled flow of water, (b) & (c) Check dams for preventing the flow of running water.

   (a) Source:https://pixabay.com/photos/white-water-cascade-flow-stream-983997/

   (b) Source:https://en.wikipedia.org/wiki/Manimuthar_Dam#/media/ File:Manimuthar_Dam_f.jpg

   (c) https://en.wikipedia.org/wiki/Dam#/media/ File:Lake_Parramatta,New_South_Wales.jpg

इकाई 5

# वन संसाधन

## इकाई की रूपरेखा


5.1 प्रस्तावना
संभावित अध्ययन परिणाम
5.2 वन एक संसाधन के रूप में
5.3 वन अपरूपण : कारण और परिणाम
वन अपरूपण के कारण
वन अपरूपण के परिणाम
5.4 खनन कार्य और बांध निर्माण का पर्यावरण, वन एवं जैवविविधताा पर प्रभाव
5.5 जनजातीय जनसंख्या और उनके अधिकारों पर प्रभाव
5.6 वन संसाधनों का संरक्षण और प्रबंधन
5.7 सारांश
5.8 अंत में कुछ प्रश्न
5.9 उत्तर
5.10 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री


## 5.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने भूमि और जल संसाधनों के विषय में पढ़ा था। इस इकाई में हम एक संसाधन के रूप में वनों पर चर्चा करेंगे। आपने अपनी सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में आरंभिक मानवों के विषय में पढ़ा होगा जो मूलरूप से वनों में घूमते थे। वे अपना भोजन, वस्त्र और आश्रय वनों से ही प्राप्त करते थे। बाद में मनुष्यों ने वनों को काटकर बस्तियां बसाना आरंभ कर दिया। लेकिन जीवन सहजीवी रूप से अभी भी वनों पर अत्यधिक निर्भर था। 18वीं. सदी में औद्योगिक क्रांति के बाद, मनुष्य वनों का अंधाधुंध दोहन करने लगे, बिना इस बात पर विचार किए कि इसका पृथ्वी और उसके पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

इस इकाई में हम अनुभाग 5.2 में एक संसाधन के रूप में वनों के आर्थिक, पारिस्थितिक और सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व का वर्णन करेंगे। अनुभाग 5.3 और 5.4 में वन अपरूपण के विभिन्न कारणों और परिणामों की व्याख्या दी गई है और फिर अनुभाग 5.5 में कुछ चयनित अध्ययन दी गई हैं। अंतिम अनुभाग 5.6 में वन संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की विधियों का वर्णन किया गया है।

## संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई को पूरा पढ़ने के बाद आप :

- ❖ एक संसाधन के रूप में वनों के महत्व को समझा सकेंगे,
- ❖ वन अपरूपण (deforestation) के विभिन्न कारणों और परिणामों को समझा सकेंगे;
- ❖ पर्यावरण, वनों एवं जैवविविधता पर खनन, बांध निर्माण और अन्य विकासात्मक कार्यों के प्रभाव का विश्लेषण कर सकेंगे;
- ❖ विभिन्न केस अध्ययन के माध्यम से वन में रहने वाले व्यक्तियों और उनके अधिकारों पर खनन कार्य, बांध निर्माण और अन्य विकास कार्यों के असर को रेखांकित कर सकेंगे; तथा
- ❖ वन संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की विभिन्न विधियों का वर्णन कर सकेंगे।

## 5.2 वन एक संसाधन के रूप में

वन हमारी संपदा हैं जो हमें विविध प्रकार के उत्पाद जैसे इमारती लकड़ी, जलावन की लकड़ी, चारा, फाइबर/रेशा, फल, जड़ीबूटियां, सौंदर्य प्रसाधन और अनेक प्रकार की अपरिष्कृत सामग्रियां/कच्चा माल प्रदान करते हैं जिसका उपयोग उद्योगों में होता है। अनेक विविध प्रकार के स्तनधारी जीव और पक्षी जो वनों में रहते हैं, उपयोगी सजीव संसाधन का काम करते हैं (चित्र 5.1)। वन मृदा निर्माण, जल संरक्षण और ऑक्सीजन के पुर्नउत्पादन में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। वृक्ष अपनी जैवमात्रा (biomass) में $CO_2$ का यौगिकीकरण करते हैं और वाष्पोत्सर्जन (वायुमंडल में आर्द्रता की हानि) के द्वारा वे जलवायु को मध्यम स्तर पर बनाए रखते हैं। क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि अगर दुनिया में वन नहीं रहेंगे, तो क्या होगा? जैसा कि ऊपर बताया गया है, ये अनेक कार्य करते हैं जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता हैं। लेकिन कुछ कार्य ऐसे हैं जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा जा सकता है जैसे कि वायु का शुद्धिकरण, कार्बन सिंक (कार्बन को अवशोषित कर लेना आदि)।

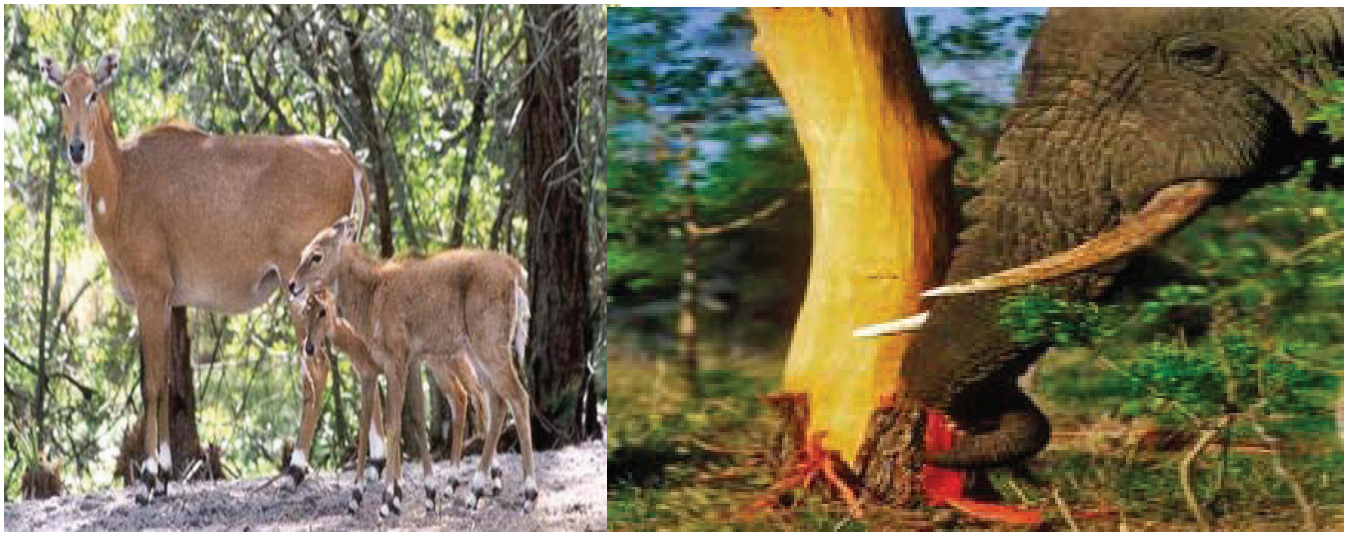

चित्र 5.1 : वन अनेक जीवन प्रकारों को सहारा देते हैं: a) नीलगाय, हिरण का बच्चा; b) एक हाथी पीली छाल वाले एकेशिया (बबूल) के पेड़ से खाते हुए।

व्यापक रूप से वनों द्वारा किए जाने वाले (ऊपर बताए गए) सभी कार्यों को तीन प्रमुख शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता है : आर्थिक, पारिस्थितिक और सामाजिक।

**(i) आर्थिक महत्व :**

वन पृथ्वी ग्रह पर उपलब्ध सबसे विशाल नवीकरणीय संसाधन (renewable resources) है। ये विविध प्रकार की वस्तुएं और सेवाएं प्रदान करते हैं जिनमें भोजन, पशु चारा और ईंधन सम्मिलित हैं। लकड़ी का उपयोग घर, फर्नीचर, माचिस, हल, सेतु और नौका बनाने के लिए किया जाता है। वन उत्पाद जैसे टैनिन, गोंद, मसाले, मोम, शहद, कस्तूरी और जानवरों की खालें सभी वनों के जंतु और वनस्पतिजात् द्वारा प्रदान किए जाते हैं। पादपों के फल, पत्तियां, जड़े और कंद वन के जनजातीय जनों को भोजन होते हैं। लकड़ी और बांस के पल्प (लुगदी) का उपयोग कागज और रेयॉन बनाने में किया जाता है। वनों के जंतु ओर वनस्पतिजात् अनेक जीवन निर्वहन पदार्थों जैसे औषधियों, कीटनाशियों और पीड़कनाशियों को भी प्रदान करते हैं। इन पदार्थों की कटाई दीर्घोपयोगी रूप से की जानी चाहिए जिससे कि यह वन के संसाधन मूल्य को दीर्घकालिक रूप से बढ़ा सकें।

**(ii) पारिस्थितिक महत्व :**

**(a) भूमंडलीय जलवायु का संतुलन** : वन प्राकृतिक चक्रों जैसे जलचक्र और कार्बन चक्र को प्रभावित करके भूमंडलीय जलवायु को प्रभावी रूप से स्थिरीकृत करते हैं। आपने विद्यालय में इन चक्रों के विषय में पढ़ा होगा। जैसा कि आप जानते हैं वर्षा का स्थानिक और कालिक पैटर्न वनों द्वारा अत्यधिक प्रभावित होता है। कितना पानी मृदा में बना रहेगा और कितना बह जाता है जिससे कभी-कभी बाढ़ आ जाती है, यह भी वनाच्छद (tree cover) पर निर्भर करता है। इसी प्रकार वन वायुमंडलीय कार्बन डाई ऑक्साइड के स्तर को भी प्रभावित करते हैं। वृक्ष जीवमात्रा कार्बन-डाइऑक्साइड को एक नियत स्तर पर बनाए रखती है। इसलिए वन कार्बन सिंक यानी वायुमंडल से कार्बन-डाईऑक्साइड को अवशोषित करने की क्षमता के प्रमुख स्रोत की तरह काम करते हैं। दूसरे शब्दों में कार्बन सिंक एक प्राकृतिक या कृत्रिम रिजर्वायर (भंडार) होता है जो कुछ कार्बन युक्त रासायनिक यौगिकों को अनिश्चितकाल तक के लिए एकत्रित और भंडारित कर सकता है। जब लकड़ी को जलाते हैं तो यह निर्मुक्त होती है। इसका ग्रीनहाउस प्रभाव की मात्रा और भूमंडलीय तापन (global warming) पर सीधा असर होता है। दूसरे शब्दों में, अधिक वनों के होने से प्रकाश संश्लेषण के काल में वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड का अधिक उत्सर्जन होता है जिससे वायुमंडल में ग्रीनहाउस प्रभाव में कमी आती है। इसलिए ग्रीनहाउस प्रभाव को कम करने के एक उपाय के रूप में व्यापक स्तर पर वृक्षारोपण किया जाता है।

**(b) जैवविविधता का संरक्षण** : वन जमीन पर जैवविविधता के सामान्य भंडार हैं क्योंकि ये सजीवों की उत्तरजीविता और वृद्धि के लिए आदर्श स्थितियां प्रदान करते हैं। प्रति इकाई क्षेत्र में प्रजातियों की संख्या वन में किसी भी अन्य थलीय पारिस्थितिक तंत्र की अपेक्षा कहीं अधिक होती है। उदाहरण के लिए, उष्णकटिबंधी वर्षावन पृथ्वी के भूक्षेत्र का 7% से भी कम क्षेत्र घेरते हैं लेकिन यहां सभी ज्ञात जीव प्रजातियों की 50 प्रतिशत से भी अधिक पाई जाती है। सभी ज्ञात पादपों में से लगभग 62% इन वर्षावनों में पाए जाते हैं। इसीलिए

अमेजन और नील बेसिन के वर्षा वनों को बचाने के लिए अभियान निरंतर बढ़ते जा रहे हैं। जैवविविधता को संरक्षित करने की आवश्यकता और महत्व के बारे में बढ़ती जागरूकता मनुष्यों की वनों के महत्व को समझने में सहायक हो रही है। क्या आप समझते हैं कि वर्षावनों की सुरक्षा के लिए ये जागरूकता अथवा अभियान पर्याप्त हैं। इस पर विचार कीजिए। हम संरक्षण के कुछ तरीकों के विषय में इस इकाई के अंतिम भाग में चर्चा करेंगे।

(c) **प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों और प्रक्रियाओं को सहारा देना** : जैसा कि पहले बताया गया है वन कुछ कार्यों को करते हैं जो पारिस्थितिक तंत्रों और प्रक्रियाओं को प्रत्यक्ष रूप से सहारा देने के लिए महत्वपूर्ण है। इनमें से कुछ कार्य और प्रक्रियाएं निम्नलिखित हैं :

- वन, पवन और जल की क्रिया की रोकथाम करके मृदा अपरदन को रोकते हैं। इस तरह ये उर्वर उपरिमृदा का संरक्षण करते हैं।
- ये भूस्खलन को रोकते हैं और चक्रवातों तथा बाढ़ की प्रबलता को कम करते हैं।
- मृदा अपरदन की रोकथाम करके; वन जलाशयों/रिर्जवॉयर समेत जलनिकायों में गाद के जमा होने (सिल्टिंग) को कम करते हैं।
- वन विषैली गैसों तथा कणमय पदार्थों को अवशोषित करके वायु की गुणवत्ता को बेहतर बनाते हैं।
- ये जलभरों (watershed) की सुरक्षा करते हैं और मीठे पानी की वर्षों तक आपूर्ति को सुनिश्चित करते हैं।

(iii) **सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व** : जैसा कि प्रस्तावना में बताया गया है सभ्यता के आरंभ से ही वन हमारी सामाजिक और सांस्कृतिक प्रकृति का हिस्सा रहे हैं। हमें आज के आधुनिक और भौतिकतावादी जीवन में भी इन सांस्कृतिक बंधों के संकेत मिलते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि वनों का सौंदर्यबोधक मनोरंजन के लिए और आध्यात्मिक महत्व है।

निश्चय ही अब तक आप एक संसाधन के रूप में वनों के महत्व को समझ गए होंगें। आपने शहरीकरण, खनन उद्योग स्थापित करने, बांध, सड़कें, रेललाइनें बिछाने के लिए वनों की कटाई के बारे में समाचार पत्रों में पढ़ा अथवा दूरदर्शन समाचारों में देखा होगा। क्या आप जानते हैं कि दुनियाभर में वन अपरूपण की दर इतनी अधिक है कि यह अब हमारे जीवन को प्रभावित करने लगी है। आगामी अनुभाग में हम वन अपरूपण की मात्रा, कारणों और परिणामों के विषय में चर्चा करेंगे।

## बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 30 शब्दों तक में दीजिए।

a) वन किस प्रकार कार्बन सिंक की भांति कार्य करते हैं?

b) वनों के कोई तीन सामाजिक-सांस्कृतिक महत्व बताइए।

## 5.3 वन अपरूपण : कारण और परिणाम

वन अपरूपण का आशय स्थानीय वनों का स्थायी रूप से सफाया करना अथवा उन्हें नष्ट करने से है। ये आकलन किया गया है कि वर्तमान में स्थानीय वनाच्छादन पृथ्वी की भूसतह का लगभग 21% भाग बनाता है। वर्ल्ड रिसोर्स इंस्टीट्यूट (विश्व संसाधन संस्थान) के अनुसार वन अपरूपण को भूमि उपयोग समस्या की सबसे गंभीर समस्याओं में से एक माना जाता है। दूसरा प्रमुख सरोकार वन अपरूपण के होने की दर का है। वर्तमान में 1.2 करोड़ हैक्टेयर वन क्षेत्र का वार्षिक रूप से सफाया किया जाता है। इस वन अपरूपण का लगभग अधिकांश भाग आर्द्र वनों और खुले उष्णकटिबंधी जंगलों में होता है। यह पूर्वानुमान किया गया है कि यदि इसी दर से वन अपरूपण होता रहा तो वर्ष 2050 तक अमेजन और जायरे बेसिन और कुछ संरक्षित वनों और अभ्यारणयों/पार्क के सरंक्षित क्षेत्रों के अतिरिक्त सभी आर्द्र उष्णकटिबंधी वन लुप्त हो सकते हैं। भारत में वनाच्छदन कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 24.39 प्रतिशत है। लेकिन, ये आकलन किया गया है कि देश की पारिस्थितिक और आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए 33% वनाच्छदन की आवश्यकता है। वन अपरूपण के कुछ प्रमुख कारण हैं।

### 5.3.1 वन अपरूपण के कारण

आइये अब हम वन अपरूपण के मुख्य कारणों की विश्व में सामान्य तथा भारत में विशेष रूप से चर्चा करते हैं:

चित्र 5.2 : a) वन में वृक्षों की कटाई ; b) खड़ी, अस्थिर ढालों पर पेड़ों की कटाई और सड़क बनाने से मृदा का अपरदन जलभरों की क्षति, वन्यजीवों का विस्थापन हो जाता है और वनों का पुर्नजनन कठिन हो जाता है।

(i) **जनसंख्या विस्फोट** : निरंतर बढ़ती मानव जनसंख्या वन अपरूपण का एक प्रमुख कारण है। यह पर्यावरण के लिए प्रमुख खतरा है। वन क्षेत्र के बड़े भागों को खेती, खनन कार्यों, नई बस्ती बसाने और विद्यमान बस्तियों के विस्तार तथा बुनयादी ढांचागत, विकास जैसे सड़क और रेल पथ बनाने के लिए काटा जाता है। जनसंख्या में वृद्धि वन उत्पादों जैसे इमारती और जलावन की लकड़ी, कागज और अन्य महत्वपूर्ण वन उत्पादों की मांग को बढ़ा देती है, जिससे वनों की कटाई आवश्यक हो जाती है।

(ii) **वनों में आग** : यह वन अपरूपण का एक अन्य प्रमुख कारण है। वनों में आग या तो प्राकृतिक रूप से लग जाती है अथवा मानव प्रेश्रित होती है। वनों में आग लगने के कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं :

- वनों के तल पर शुष्क ह्यूमस (Humus) और कार्बनिक पदार्थ की मोटी परत भूमि अथवा सतह पर असावधानी से आग लग जाने के लिए आदर्श स्थितियां प्रदान करते हैं। सिगरेट के जलते ठंठों को सूखे पत्तों पर फेंक देने से वो आसानी से आग पकड़ सकते हैं।
- सघन आच्छादित वनों में शिखरों पर आग लगती है जहां वृक्षों के शीर्ष भाग एकदूसरे से निरंतर रगड़ खाते रहने के कारण उत्पन्न होने वाले ताप से आग पकड़ सकते हैं।

आग पूरे विकसित पेड़ों को नष्ट कर सकती है, बीजों को ह्यूमस, भूमि की वनस्पतियों और जंतु जीवन को मार अथवा झुलसा सकती है।

(iii) **पशुओं द्वारा चराई** : मवेशियों द्वारा अत्यधिक चराई के कारण वन की मृदा के कुचले जाने के दूरगामी प्रभाव होते हैं जैसे कि मृदा की रंध्रता में कमी, मृदा अपरदन और मरूस्थलीकरण ने पहले के उर्वर वन क्षेत्र की मृदा की उत्पादकता को कम कर दिया है।

(iv) **पीड़क जीवों का हमला** : पीड़क जीव पत्तियों को खाकर तनों में गढ़ढे बनाकर और रोगों को फैलाकर वृक्षों को नष्ट कर देते हैं।

## 5.3.2 वन अपरूपण के परिणाम

वन जलवायु, जैवविविधता, वन्य जंतुओं, फसलों और औ ाधीय पादपों से निकट रूप से संबन्धित है। व्यापक स्तर पर वन अपरूपण के दूरगामी असर होंगे। इनमें प्रमुख हैं :

(i) वन्य जीवों के आवासों का नष्ट होना। वृक्षों पर रहने वाले जंतु आश्रय और भोजन से वंचित हो जाऐंगे,

(ii) वनस्पति आच्छादन में कमी के कारण मृदा अपरदन में वृद्धि,

(iii) पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषण के द्वारा निर्मुक्त की जाने वाली ऑक्सीजन में कमी,

(iv) लकड़ी जलाने और पादपों द्वारा कार्बन के कम यौगिकीकरण के कारण प्रदूषण का बढ़ना,

(v) वन उत्पादों की उपलब्धता में कमी,

(vi) पादप, जंतु और सूक्ष्मजीवी जैवविविधता में कमी,

(vii) ईंधन की लकड़ी की कमी और वनों के आसपास रहने वाले व्यक्तियों की आमदनी और जीवन की गुणवत्ता में कमी,

(viii) अधिक वाह जल और इस कारण भूजल के अत्यधिक दोहन से भूजल स्तर में कमी,

(ix) वनस्पतियों को जलाने से वायु के कार्बन-डाई ऑक्साइड के स्तर में वृद्धि के कारण भूमंडलीय तापन हो रहा है जिससे हिम गोप और ग्लेशियर पिघल रहे हैं और इस कारण तटीय क्षेत्रों का जलस्तर बढ़ रहा है।

## बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए :

(i) भारत में वनआच्छादन कुल भौगोलिक क्षेत्र का ..... प्रतिशत है लेकिन देश को अपनी पारिस्थितिक और आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए अपने क्षेत्रफल का ..... प्रतिशत भाग वनों से आच्छादित करने की आवश्यकता है।

(ii) ..... आग सघन रूप से आच्छादित वनों में लगती है।

(iii) वन अपरूपण से ..... द्वारा पौधों से निकलने वाली ..... की निर्मुक्ति में कमी आती है।

## 5.4 खनन कार्य और बांध निर्माण का पर्यावरण, वन और जैवविविधता पर प्रभाव

लकड़ी की कटाई, खनन कार्य और बांध बनाना विकासशील देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अभिन्न भाग हैं। दुर्भाग्य से वन ऐसे क्षेत्रों में स्थित है जो खनिज संसाधनों से समृद्ध है।

खनिज आधारित उद्योग जैसे लोहा और इस्पात, एल्यूमिना परिशोधनशाला इत्यादि भी इस क्षेत्रों में स्थित है। देश के शीर्ष 50 खनिज उत्पादक जिलों में, लगभग आधे से अधिक जिलों में अनुसूचित जनजाति सर्वधिक है। औसत वनाच्छान इन जिलों में 28% है, जोकि राष्ट्रीय औसत 20.9% से बहुत ज्यादा है। (सेंटर फॉर साइंस और एनवायरमेंट, 2008)

वन नदी घाटियों के गहरे तटबंधों को भी आच्छादित किए रहते हैं जो हाइडल (पनबिजली) और सिंचाई परियोजनाओं के विकास के लिए बहुत उपयुक्त होते हैं। अतः संरक्षण और विकास के बीच निरंतर हितों की लड़ाई जारी रहती है। हमें ये समझने की जरूरत है कि दीर्घावधि पारिस्थितिक हितों को अल्पावधि आर्थिक हितों के लिए बलिदान नहीं किया जा सकता है जिससे दुर्भाग्यवश वन अपरूपण होता है। ये वन जहां विकास परियोजनाओं की योजना बनाई जाती है हजारों जनजातीय जनों को विस्थापित कर सकते हैं जो इन योजनाओं का क्रियान्वयन किए जाने पर अपने घर खो देते हैं।

बाढ़, सूखा और भूस्खलन इन क्षेत्रों में ज्यादा प्रचलित मुद्दे है। वन, जैवविविधता के रूप में प्रकृति के उपहार बहुमूल्य भंडारगृह है। और उन्हें नष्ट करने से, हम इन स्पीशीज को

बिना जाने ही खो रहे है। ये स्पीशीज बेहतर रूप से आर्थिक और औषधीय मूल्य हो सकते थे। लेकिन, वन अपरूपण के परिणाम की वजह से इन स्पीशीज के भंडारगृह की कमी हुई है जो कि, वह लाखों वर्षों पहले एक चक्र में उत्पन्न हुए थे।

## 5.5 जनजातीय जनसंख्या और उनके अधिकारों पर प्रभाव

गरीबी बीच में बहुतायत है, प्रकृति भरपूर है फिर भी जनजाति गरीब है। यह कथन हमारे देश में अधिकांश जनजातिय जनंसख्या की स्थिति का वर्णन करता है। देश के प्रमुख जनजातीय क्षेत्रों के पास संपदा से सम्पन्न वन आच्छादन, खनिज असर क्षेत्र और पर्याप्त संख्या में मुख्य नदियों के जल विभाजन है। वन भोजन, दवा और अन्य जरूरी उत्पाद जनजातीय लोगों को उपलब्ध कराते हैं, और ये एक महत्वपूर्ण भूमिका वन में रहने वाले लोगों के जीवन और आर्थिक में निभाते हैं। जैसा कि पिछले अनुभाग में बताया गया है, विकास की क्रियाओं के वजह जैसे बांध का निर्माण, खनन, खनिज आधारित उद्योगों की स्थापना इत्यादि ने जनजातीय लोगों को उनकी भूमि से हस्तांतरित कर दिया।

यह हस्तांतरण उन लोगों के रोटी–रोटी को वंचित कर दिया जो कि जनजातीय लोग मुख्यतः प्राकृतिक संसाधन आधारित अनौपचारिक अर्थव्यवस्था पर निर्भर थे। उनकी यह प्राकृतिक संसाधन आधारित अनौपचारिक अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि, जो स्थिर और झूम दोनों थे, दूसरी ओर गैर लकड़ी वन उत्पाद जैसे औषधीय जड़ी बूटी, खाद्य फूल पत्तियां, और फल पर निर्भर थे। वे छोटी लकड़ी और जलाने योग्य लकड़ी भी वन से इकट्ठा करते थे।

इस वजह से, विकास की सीमा ने उनके कृषि और वन भूमि को प्रभावित किया जोकि प्राथामिक रूप से उनके रोजी–रोटी थे। विकास की प्रक्रिया ने उन्हें अनौपचारिक से औपचारिक अर्थव्यवस्था में धकेल दिया और बिना किसी तैयारी के -यह उनके लिए नया था। वे कृषि भूमि और वन पर पूर्णतः निर्भर रहते थे जो कि वे विभिन्न परियोजना की वजह से खो चुके है। जब उन्हें इनकी क्षतिपूर्ति मुद्रा के रूप में प्राप्त हुई अधिकांश समुदाय अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में रह रहे इस चीज से अपरिचित थे। ऊपर के बताये गये केस में सामान्य संपत्ति संसाधन की क्षतिपूर्ति नहीं की गई। इसलिए इस समस्या को पता करना जरूरी था। भारत सरकार ने एक अधिनियम संसद में पारित किया जिसका नाम अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकार स्वीकरण) अधिनियम 2006 रखा जिसके अंतर्गत विभिन्न गति विरोध अड़चनों को पता किया।

**अनुसूचित जनजाति और अल्प पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकार स्वीकरण) अधिनियम, 2006.**

यह अधिनियम वनों में रहने वाली उन सभी अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन के निवासियों के वन भूमि में वन अधिकारों और व्यवसाय की पहचान करता और प्रदान करता है जो पीढ़ियों से इन वनों में रह रहे हैं लेकिन उनके अधिकारों को अभिलेखित नहीं किया गया है : जिससे प्रदान किए गए वन अधिकारों को अभिलेखित करने के लिए और इस स्वीकरण/पहचान के लिए आवश्यक साक्ष्य की प्रकृति और वन भूमि के संदर्भ में निहित होने के लिए एक

रूपरेखा प्रदान की जा सके। जबकि वनों में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों के स्वीकृत अधिकारों में दीर्घोपयोगी उपयोग, जैवविविधता के संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए दायित्व और अधिकार सम्मिलित हैं और इस प्रकार वन निवासी अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों की आजीविका और खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ ही वनों के संरक्षण की सामाजिक व्यवस्था को मजबूत किया गया है और जबकि पूर्वजों की भूमि और उनके आवास पर वन अधिकारों को औपनिवेशिक काल के साथ ही स्वतंत्र भारत में राज्य वनों के समेकन/संगठन में उचित रूप से नहीं पहचाना गया है जिससे वनों में रहने वाले अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय हुआ है जो वन के पारिस्थितिक तंत्र की उत्तरजीविता और दीर्घोपयोगिता के लिए अभिन्न है और जबकि वनों में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों जिनमें वे सम्मिलित हैं जिन्हें राज्य विकास हस्तक्षेपों के कारण स्वयं को दूसरे स्थानों पर बसाने के लिए बाध्य किया गया, के पट्टेदारी और पहुंच के अधिकारों की लंबे समय से चली आ रही असुरक्षा को संबोधित करना आवश्यक हो गया है। इसे संसद द्वारा भारत गणराज्य के सत्तानवें वर्ष में लागू किया जाना है।

Source : https://indiacode.nic.in/bitstrean/123456789/2070/1/A/2007-02.pdf

## बोध प्रश्न 3

1. कोई भी चार गैर–लकड़ी आधारित वन उत्पाद के नाम बताइए।
2. किस तरह से वन अधिकार अधिनियम 2006, जनजातीय और अन्य वन निवासी को सक्षम, वन संरक्षण को मजबूती जबकि रोजी–रोटी और भोजन सुरक्षा को सुनिश्चित करता है।

## 5.6 वन संसाधनों का संरक्षण और प्रबंधन

इमारती और जलाने की लकड़ी तथा अन्य वन उत्पादों के लिए वनों के अत्यधिक दोहन और उनके पुर्नजनन के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं किए जाने के कारण वन तेजी से लुप्त होते जा रहे हैं (चित्र 2.5)। इससे पर्यावरणीय असंतुलन हो गया है। उदाहरण के लिए, अधिकांश वर्षाजल वाह जल के रूप में लुप्त हो जाता है जो पहाड़ी ढलानों पर अबाध गति से प्रवाहित होकर अक्सर बाढ़ का कारण बनता है। उपरि मृदा के अत्यधिक मात्रा में बह जाने से उर्वरता कम हो जाती है और फसल उत्पादकता घट जाती है। वन अपरूपण के इन परिणामों के कारण हमारी भारत सरकार ने वनों के संरक्षण और अधिक वृक्ष उगाने के लिए एक सशक्त वन नीति अपनायी है।

**(i) वैकल्पिक स्रोत विकसित करना और विकल्पों को प्रोत्साहन देना :** वैकल्पिक ईंधनों और कागज, खेल सामग्रियों, पैकेजिंग के बक्सों, फर्नीचर और इमारतों के दंडों के लिए विकल्पों का पता लगाना अनिवार्य हो गया है। वैकल्पिक स्रोतों के विकास के लिए अनुसंधान किए जा रहे हैं, कुछ मामलों में प्लास्टिक और मिश्रित/सम्मिश्र पदार्थ इमारती लकड़ी के उपयोग को विस्थापित करने में उपयोगी रहे हैं।

**(ii) वन रोपाई के क्षेत्रफल में वृद्धि** : वृक्षों की रोपाई खाली या अनुपयुक्त भूमि और व्यर्थ, निम्नीक त और सीमान्त भूमि पर विशेष रूप से सड़क किनारे, रेल पथों के दोनों ओर, समोच्च रेखाओं पर और कृषि उत्पादन के लिए अनुपयुक्त भूमि पर की जा सकती है। वनों के बाहर के क्षेत्रों में वृक्षों की रोपाई से इमारती लकड़ी, चारे और जलावन की लकड़ी के लिए वनों पर दबाव कम होगा। इसके अतिरिक्त वन अपरूपित क्षेत्रों पर व क्षारोपण की आवश्यकता है।

**(iii) ऐसे वनों के क्षेत्रफल को बढाना जो स्थायी रूप से इमारती लकड़ी के उत्पादन के लिए संरक्षित हैं** : दीर्घोपयोगी वन प्रबंधन में सबसे गंभीर बाधा समर्पित वनों, विशेषरूप से ऐसे वनों की कमी है जिन्हें विशेषरूप से इमारती लकड़ी के उत्पादन के लिए अलग रखा गया है। यदि वन में इमारती लकड़ी के उत्पादन के लिए समर्पित दीर्घावधि समय काल नहीं होगा तो वनों के दीर्घावधि हितों की देखरेख के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं होगा। एफएओ (2001) ने पाया है कि औद्योगिकीकृत देशों में 89 प्रतिशत वनों का किसी न किसी रूप में प्रबंधन किया जा रहा है लेकिन विकासशील देशों में सिर्फ लगभग छह प्रतिशत वनों का ही प्रबंधन हो रहा है। यदि 20 प्रतिशत वन क्षेत्र को अलग रखा जा सके तो न सिर्फ इमारती लकड़ी की आवश्यकता को दीर्घोपयोगी रूप से पूरा किया जा सकता है बल्कि संरक्षित क्षेत्रों को सुदृढ़ीकृत करने के लिए बफर मंडल/जोन भी बनाए जा सकते हैं।

**(iv) वनों के दीर्घोपयोगी प्रबंधन को अपनाना और प्रोत्साहित करना** : पारिस्थितिक दीर्घोपयोगिता प्राप्त करने का अर्थ है कि वन के पारिस्थितिक महत्व को निम्नीकृत न किया जाए और यदि संभव हो उन्हें बेहतर बनाया जाए। इसका अर्थ है कि वनवर्धन और प्रबंधन जैवविविधता को कम न करें, मृदा अपरदन को नियंत्रित किया जाए, मृदा की उर्वरता लुप्त न हो, वनों के स्थान पर और उनके बाहर जल की गुणवत्ता बनी रहे और वनों के स्वास्थ्य और जीवनक्षमता की सुरक्षा की जानी चाहिए। यद्यपि अकेले पर्यावरणीय सेवाओं का प्रबंधन आर्थिक और सामाजिक रूप से दीर्घोपयोगी नहीं है। यह तब तक नहीं होगा जब तक विकासशील देश विकास और समृद्धि के उस चरण तक न पहुंच जाए कि वे ऐसा करने की लागतों का समायोजन करने में सक्षम हो सके। अप्रयुक्त भूमि के विशाल क्षेत्र हैं जिसमें से कुछ निम्नीकृत और कम उर्वरता के हैं। इस भूमि को वापस उपजाऊ बनाने के लिए प्रोद्यौगिकीय विकास किए जा रहे हैं। यह एक प्रमुख प्राथमिकता होनी चाहिए क्योंकि काटे गए उष्णकटिबंधी वनों का काफी भाग अंततः कम उर्वरता वाली निम्नीकृत भूमि में परिवर्तित हो जाएगा।

**(v) सूचना बेस/आधार और नियमित निगरानी के लिए एक विश्वसनीय कार्यविधि विकसित करना** : वन क्षेत्र कितना है कहां पर है और वहां कौनसी वनस्पतियां हैं, इसकी जानकारी होना बड़ा सामान्य प्रतीत होता है लेकिन आश्चर्य की बात है कि यह सबसे मूलभूत जानकारी भी सदैव उपलब्ध नहीं होती है। किसी वन पारिस्थितिक तंत्र का उचित प्रबंधन पहले उसे समझे बिना करना संभव नहीं है। नई सुदूर संवेदन (रिमोट सेन्सिंग) तकनीकों ने वन अपरूपण के मुख्य स्थानों (हॉट स्पॉट) को चिन्हित करना व्यवहारिक और वहनीय बना दिया है। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय निगरानी के प्रयासों की जिम्मेदारी ले सकता है जिसके तात्कालिक लाभ होंगे। पहली प्राथमिकता भूमंडलीय वन अपरूपण और वनों की कमी के कारणों,

स्थानों और दर की निगरानी को समन्वित करने के लिए वित्तीय सहायता और परियोजना तथा नीतिगत् हस्तक्षेपों के प्रभाव को जानने की है।

(vi) वनों में आग लगने को रोकने के लिए एक प्रभावी तंत्र को स्थापित करना।

(vii) वृक्षों की अनाधिकृत कटाई से निपटने के लिए कानूनों को सख्ती से लागू करना।

**(viii) कृषि वानिकी और सामाजिक वानिकी को प्रोत्साहन देना** : ग्रामीण जन अपने जलावन की लकड़ी और इमारती लकड़ी की आवश्यकताओं को आंशिक रूप से तेजी से वृद्धि करने वाले वृक्षों को अपने गांव की सीमाओं में फुटपाथ, सड़कों के किनारें, रेलपथों के किनारे और गलियों अथवा नहरों और नदियों के किनारे, खेतों के चारों ओर खाली स्थानों पर उगाकर पूरा करते हैं। सामाजिक वानिकी का उद्देश्य ईंधन, चारे, फल, इमारती लकड़ी की आवश्यकता और अन्य आवश्यकताओं को पूरा करना है।

**(ix) भागीदारी से वन प्रबंधन और अधिकार** : वन की नियति में दिलचस्पी रखने वाले सभी पक्षों को इसकी योजना बनाने, प्रबंधन और लाभ की साझेदारी में सम्मिलित होना चाहिए। अधिकारों का संतुलन सार्वजनिक स्वामित्व वाले अत्यधिक संरक्षित क्षेत्रों के रूप में समाज के हितों की ओर उन्मुख हो सकता है। राज्य स्वामित्व और प्रबंधन को बनाए रखा जा सकता है लेकिन दीर्घोपयोगी रूप से इमारती लकड़ी की कटाई की अनुमति होनी चाहिए। अभी तक विश्व के अधिकांश उष्णकटिबंधी वन राज्य/राष्ट्र के स्वामित्व वाले हैं लेकिन वनों के स्वामित्व में समुदाय की भागीदारी को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। वन अपरूपण की समस्या को संबोधित करने के लिए भूमि सुधार अनिवार्य है। यद्यपि इन सुधारों को मजबूत करने के लिए किसानों के हित में एक सशक्त स्थानांतरण की आवश्यकता है। यही नहीं, स्थानीय वन निवासियों तथा अन्य जनों के अधिकारों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जो अक्षुण्ण वनों पर निर्भर करते हैं। इसलिए, स्थानीय निवासियों के पारंपरिक कानूनों की स्थानीय अधिकारों के रूप में पहचान से वनों के स्वामित्व और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोगक से संबन्धित पारंपरिक और वैधानिक नियम कानूनों के बीच विवाद को संबोधित किया जा सकेगा और साथ ही वन संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित होगा। इसको ध्यान में रखते हुए, विभिन्न राज्य सरकारों ने भारत में संयुक्त वन प्रबंधन प्रोग्राम को क्रियान्वित किया, सबसे पहले यह 1970 में, हरियाणा और पश्चिम बंगाल में सफलतापूर्वक क्रियान्वयन हुआ।

**बॉक्स 5.2: संयुक्त वन प्रबंधन (जेएफएम)**

वन प्रबंधन में स्थानीय जनों को सम्मिलित करने की आवश्यकता एक बढ़ता सरोकार बन गई है। स्थानीय जन ही किसी क्षेत्र को हरा–भरा रखने में सहायता करेंगे यदि उन्हें संरक्षण करने से कुछ आर्थिक लाभ मिलता दिखाई देगा। स्थानीय समुदायों और वन विभाग के बीच एक अनौपचारिक व्यवस्था 1972 में पश्चिम बंगाल के मिदनापुर जिले में आरंभ हुई थी। संयुक्त वन प्रबंधन अब एक औपचारिक संधि बन गई है जिसमें स्थानीय समुदायों के अधिकरों और हितों की पहचान और सम्मान किया गया है जिसकी वे वन संसाधनों से मांग करते है। जेएफएम योजना के अंर्तगत स्थानीय समुदाय के सदस्यों के साथ वन संरक्षण समितियों का गठन किया गया है ये वन आच्छादन को पुनः बनाने में भागीदारी करती है और किसी क्षेत्र को अत्यधिक दोहन किए जाने से सुरक्षा करती है।

चित्र 5.3 पहाड़ों की खड़ी ढ़ालों पर चीड़ के वृक्षों की रोपाई।

## बोध प्रश्न 4

निम्नलिखित प्रश्न का उत्तर 30 शब्दों में दीजिए।

1. पारंपरिक और वैधानिक नियम कानूनों से संबंधित वन स्वामित्व और प्राकृतिक संसाधन उपयोग के बीच विवाद को कैसे पता करते हैं।
2. सामाजिक वानिकी के उद्देश्य क्या है?

## 5.7 सारांश

- एक संसाधन के रूप में वनों द्वारा किए जाने वाले कार्यों को तीन प्रमुख शीर्षकों के अंतर्गत श्रेणीकृत किया जा सकता है : आर्थिक, पारिस्थितिक और सामाजिक। पारिस्थितक कार्यों में भूमंडलीय जलवायु को स्थिरीकृत करना, जैवविविधता की सुरक्षा और भूमंडलीय पारिस्थितिक तंत्र और प्रक्रियाओं को बनाए रखना सम्मिलित हैं। वनों के नैतिक, आध्यात्मिक, मनोरंजन और पर्यटन मूल्यों के संदर्भ में भी सामाजिक सांस्कृतिक महत्व हैं। वन अपरूपण के लिए अनेक कारण उत्तरदायी है। कुछ तात्कालिक और स्पष्ट कारण लकड़ी भूमि उपयोग और भूमि आच्छादन में परिवर्तन के लिए कटाई, वनों की आग और पीड़क जीवों का हमला तथा अप्रत्यक्ष अथवा निहित कारण बढ़ती जनसंख्या है।

- व्यापक स्तर पर वन अपरूपण के दूरगामी परिणाम होंगे जैसे वन्य जंतुओं के आगामी निवारण का नष्ट होना और वृक्षों पर रहने वाले जंतुओं के लिए भोजन और आवास की कमी, बढ़ता मृदा अपरदन पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषण के द्वारा निर्मुक्त होने वाली ऑक्सीजन की मात्रा में कमी, लकड़ी जलाने और पादपों द्वारा कार्बन यौगीकीकरण में कमी के कारण प्रदूषण में वृद्धि, जन उत्पादों की उपलब्धता में वृद्धि, पादप, जंतु और सूक्ष्मजीवी विविधता में कमी, जलावन की लकड़ी में कमी, वनों के आसपास रहने वाले व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता में कमी, अधिक वाह जल के कारण भूजल स्तर का कम होना और इस कारण भूमिगत जल के उपयोग में वृद्धि तथा वनस्पतियों को जलाने के कारण वायु में कार्ब डाइ ऑक्साइड के स्तर में वृद्धि

से भूमंडलीय तापन हुआ है जिससे हिमगोप और ग्लेशियरों के पिघलने के कारण तटीय क्षेत्रों में जल बढ़ रहा है।

- संरक्षण और विकास के बीच एक सतत् हितों का टकराव है। ये समझने की आवश्यकता है कि अल्पकालिक आर्थिक लाभों के लिए दीर्घकालिक पारिस्थितिक लाभों का बलिदान नहीं किया जा सकता है।
- वैकल्पिक स्रोतों को विकसित करने और विकल्पों को बढ़ावा देने के लिए वैज्ञानिक विधियों का उपयोग, वनों की वृद्धि की निगरानी और प्रबंधन, वनों की आग को नियंत्रित करने और उसकी रोकथाम के लिए एक प्रणाली स्थापित करने और वन कानूनों को सख्ती से लागू करके हम अपने वन संसाधनों का संरक्षण कर सकते हैं।

## 5.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. वन एक संसाधन के रूप में तीन प्रमुख कार्य का वर्णन कीजिए।
2. वनअपरूपण के चार प्रमुख कारण का नाम बताइए।
3. वनअपरूपण के कोई पांच परिणाम बताइए।
4. संरक्षण और विकास के बीच निरंतरता का टकराव क्यों है? उपयुक्त उदाहरण के साथ समझाइए।
5. भारत में वन संसाधन के किन्ही पांच संरक्षण उपायों को समझाइए।

## 5.9 उत्तर

### बोध प्रश्न 1

a) कार्बन सिंक एक प्राकृतिक या कृत्रिम रिजर्वायर (भंडार) होता है जो कुछ कार्बन युक्त रासायनिक यौगिकों को अनिश्चित काल तक के लिए एकत्रित और भंडारित कर सकता है।

b) सौंदर्यबोधक, मनोरंजन और आध्यात्मिक महत्व

### बोध प्रश्न 2

i) 24, 33 प्रतिशत

ii) शीर्षभाग

iii) आक्सीजन, प्रकाश संश्लेषण

### बोध प्रश्न 3

i) औषधीय जड़ी–बूटी, खाद्य फूल, पत्तियां और फल

ii) वनों में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों अधिकारों में दीर्घोपयोगी उपयोग, जैव विविधता के संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने के लिए दायित्व और अधिकार सम्मिलित है और इस प्रकार वन निवासी अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों की आजीविका और खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ ही वनों के संरक्षण की सामाजिक व्यवस्था को मजबूत किया है।

## बोध प्रश्न 4

i) स्थानीय निवासियों के पारंपरिक कानूनों की स्थानीय अधिकारों के रूप में पहचान से है।

ii) सामाजिक वानिकी का उद्देश्य ईधन, चारे, फल, इमारती लकड़ी की आवश्यकता और अन्य आवश्यकताओं को पूरा करना है।

## अंत में कुछ प्रश्न

1. सभी कार्यों को तीन प्रमुख शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता है : आर्थिक, पारिस्थितिक और सामाजिक इसको वर्णन रूप में पढ़ने के लिए देखें अनुभाग 5.2।

2. वन अपरूपण के चार प्रमुख कारण है – जनसंख्या विस्फोट, वनों में आग, पशुओं द्वारा चराई और पीड़क जीवों का हमला। इसको विस्तृत रूप से समझने और उदाहरण के लिए अनुभाग 5.3 देखें।

3. वन अपरूपण के परिणाम होते हैं – वन्य जीवों के आवासों का नष्ट होना, वनस्पति आच्छादन में कमी के कारण, पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषण से आक्सीजन में कमी, प्रदूषण बढ़ना, वन उत्पादों की संख्या का घटना, पादप, जंतु और सूक्ष्मजीवी जैवविविधिता में कमी, ईधन की लकड़ी की कमी वनो के आस पास रहने वाले व्यक्तियों की आमदनी और जीवन की गुणवात्ता में कमी, भूजल स्तर में कमी, कार्बन डाई आक्साइड के स्तर में बढ़ोत्तरी (कोई भी 5)।

4. लकड़ी की कटाई, खनन कार्य और बांध बनाना विकासशील देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अभिन्न भाग है। दुर्भाग्य से वन ऐसे क्षेत्रों में स्थित है जो खनिज संसाधनों से समृद्ध है। खनिज आधारित उद्योग जैसे लोहा और इस्पात, एल्यूमिना परिशोधनशाला इत्यादि भी इस क्षेत्रों में स्थित है। देश के शीर्ष 50 खनिज उत्पादक जिलों में, लगभग आधे से अधिक जिलों में अनुसूचित जनजाति सर्वाधिक है। वन नदी घाटियों के गहरे तटबंधों को भी आच्छादित किए रहते हैं जो हाइडल (पलबिजली) और सिचांई परियोजनाओं के विकास के लिए बहुत उपयुक्त होते हैं।

5. भारत में वन संरक्षण के विभिन्न उपाय निम्नलिखित है – वैकल्पिक स्रोत विकसित करना और विकल्पों को प्रोत्साहन देना, वन रोपाई के क्षेत्रफल में वृद्धि वनों के क्षेत्रफल को बढ़ाना जो स्थायी रूप से इमारती लकड़ी के उत्पादन के लिए संरक्षित है, वनों के दीर्घोपयोगी प्रबंधन को अपनाना और प्रोत्साहित करना, सूचना आधार और नियमित निगरानी के लिए एक विश्वसनीय कार्यविधि विकसित करना वनों में आग लगने को रोकने के लिए एक प्रभावी तंत्र को स्थापित करना, वृक्षों की अनाधिकृत कटाई से निपटने के लिए कानूनों को सख्ती से लागू करना, कृषि वानिकी और सामाजिक वानिकी को प्रोत्साहन देना, और भागीदारी से वन प्रबंधन और अधिकार है।

## 5.10 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री

1. Bharucha, E. (2005) *Textbook of Environmental Studies for Undergraduate Courses,* Hyderabad: Universities Press (India) Private Limited.
2. Botkin, D. B. & Keler, E. A. 8th Ed. (2011) *Environmental Science: Earth as a Living Planet*, New Delhi: Wiley India Pvt. Ltd.
3. Centre for Science and Environment (2004) Rich Land and Poor People, New Delhi: Centre for Science and Environement.
4. Rajagopalan, R. 3rd Ed. (2015) *Environmental Studies*, New Delhi: Oxford University Press.
5. Wright, R. T. (2008) *Environmental Science: Towards a Sustainable Future,* New Delhi: PHL Learning Private Ltd.

**Acknowledgement**

Fig. 5.1: Forest supports many forms of life a) A Nilgai antelop calf; b) Elephant feeding on yellow bark Acacia tree

Source :

a) https://thefarmatwalnutcreek.com/deer-elk-nilgai-html

b) https://www.countrylife.co.za/conservation/elephant-survivors-damaraland

Fig. 5.2: Logging operations in the forest

Source: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Logging Operation on BLSF.jpg

Fig. 5.3: Planting pine trees on the steep slopes of mountains

Source: https://www.denbow.com/wp-content/uploads/2016/10/steep-slopes-1000.jpg

इकाई 6

# जैव विविधता : मूल्य और सेवाएं

## इकाई की रूपरेखा


6.1 प्रस्तावना

संभावित अध्ययन परिणाम

6.2 जैव विविधता की परिभाषा

6.3 जैव विविधता के स्तर

आनुवंशिक विविधता

प्रजातीय विविधता

पारितंत्र विविधता

6.4 भारत के जैव – भौगोलिक क्षेत्र और इनकी जैव विविधता

क्षेत्र 1 : पार हिमालय

क्षेत्र 2 : हिमालय

क्षेत्र 3 : भारतीय रेगिस्तान

क्षेत्र 4 : अर्द्ध शुष्क

क्षेत्र 5 : पश्चिमी घाट (जैव विविधता हॉट स्पॉट)

क्षेत्र 6 : दक्षिण प्रायद्वीप

क्षेत्र 7 : गंगा के मैदान

क्षेत्र 8 : पूर्वोत्तर भारत

क्षेत्र 9 : द्वीप

क्षेत्र 10: तट

6.5 जैव विविधता हॉट स्पॉट

6.6 भारत : एक बहु जैव विविधता वाला देश

6.7 जैव विविधता के उपयोगिता मूल्य

प्रत्यक्ष उपयोगिता मूल्य

अप्रत्यक्ष उपयोगिता मूल्य

गैर उपयोगिता मूल्य

6.8 सारांश

6.9 अंत में कुछ पश्न

6.10 उत्तर

6.11 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री


## 6.1 प्रस्तावना

पृथ्वी की जैव विविधता को विकसित होने में 3000 मिलियन वर्ष से अधिक का समय लगा है और आज यह मानव प्रजाति और हमारी धरती पर रहने वाले अन्य जीवों की उत्तरजीविता का आधार बनाती है। जब हम वैश्विक जैव विविधता की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य संपूर्ण विश्व में आनुवंशिक विभेदों, प्रजातियों तथा पारितंत्र की संपूर्णता से हैं।

इनमें से कई पारितंत्र बड़ी इकाइयों में सह अस्तित्व बनाते हैं, जिन्हें जैव भूगर्भीय क्षेत्र कहते हैं। भारतीय वन्य जीवन संस्थान के डब्ल्यू ए रोजर और एच एस पंवार, ने भारत के प्राकृतिक अधिवास को दस बड़े जैव भूगर्भीय क्षेत्रों में समूहित किया है। इन दस क्षेत्रों की जलवायु और जैव विविधता की इस इकाई में चर्चा की गई है। इन क्षेत्रों की संकटापन्न और स्थानिक प्रजातियों का भी उल्लेख किया गया है।

इस इकाई में भारत, जहां विशाल जैव विविधता में मौजूद है, सहित वैश्विक जैव विविधता के हॉट स्पॉट बताए गए हैं।

जैव विविधता के विभिन्न घटकों में ''संसाधन'' या ''उपयोग'' के महत्व को समझना एक तरीका होगा, जिसे मानव द्वारा इस्तेमाल किया जाता है। जैव विविधता के ''गैर संसाधन'' या ''गैर उपयोग'' के महत्त्व भी होते हैं जैसे पारितंत्र के कार्यों को बनाए रखना।

## संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो जाएँगे कि आप :

- जैवविविधता को परिभाषित कर सकें,
- जैवविविधता के विभिन्न स्तरों जैसे आनुवंशिक विविधता, प्रजाति विविधता, पारितंत्र विविधता का वर्णन कर सकें,
- उन वन्य जीवन प्रजातियों की सूची बना सकें और विश्लेषण कर सकें जो भारत के विभिन्न जैव भौगोलिक क्षेत्रों में पाए जाते हैं,
- वैश्विक जैव विविधता हॉट स्पॉट की सूची बना सकें और देश/विभिन्न पारितंत्रों में विविध जैव विविधता के कारण जान पाए तथा वैश्विक जैव विविधता के हॉट स्पॉट को अभिज्ञात करने के मानदण्डों पर चर्चा कर सकें,
- प्रत्यक्ष बनाम अप्रत्यक्ष उपयोग, निष्कर्षात्मक बनाम गैर निष्कर्षात्मक उपयोग और संसाधन बनाम गैर संसाधन उपयोग के संदर्भ में जैव विविधता के मूल्य का वर्णन कर सकें।

## 6.2 जैव विविधता की परिभाषा

जैव विविधता एक जीवित प्रकृति में विविधता होती है। विविधता के केंद्र में वस्तुओं के विभिन्न प्रकार शामिल हैं, जैसे प्रजातियां। जबकि जैव विविधता को परिभाषित करना या जैव विविधता का मापन इतना सरल नहीं है।

1992 में पृथ्वी सम्मेलन के दौरान रियो डी जेनेरियो में जैव विविधता को इस प्रकार परिभाषित किया गया है :

*"स्थलीय, समुद्री और अन्य जैविक पारितंत्रों सहित सभी स्रोतों में रहने वाले जीवित जीवों की विविधता और पारिस्थितिक संकुल, जिसका वे हिस्सा हैं, इसमें प्रजातियों के अंदर, प्रजातियों तथा पारिस्थितिक तंत्रों के बीच विविधता शामिल है।"*

### बोध प्रश्न 1

जैव विविधता को परिभाषित कीजिए।

## 6.3 जैव विविधता के स्तर

विविधता के तीन स्तर हैं, **आनुवंशिक, प्रजाति और पारिस्थितिक तंत्र** विविधता। प्रभावी तौर पर इन तीनों स्तरों को अलग नहीं किया जा सकता है। इनमें से प्रत्येक महत्वपूर्ण है, जो अंतःक्रियात्मक है और एक दूसरे पर प्रभाव डालते है। एक स्तर पर एक बदलाव से अन्य स्तरों में बदलाव हो सकता है।

### 6.3.1 आनुवंशिक विविधता

आनुवंशिक विविधता ''विविधता की मूलभूत मुद्रा'' है जो भिन्नता के लिए जिम्मेदार है। आनुवंशिक सूचना बुनियादी इकाई की यह विविधता हैं जो प्रजाति के अंदर पीढ़ी दर पीढ़ी आगे जाती है (एक ही प्रजाति की विभिन्न किस्में)। आम और धान की विभिन्न किस्में जातियों मे आनुवंशिक विविधता के उदाहरण है।

यह आनुवंशिक विविधता ही है जिससे प्रजातियां लगातार बदलती पर्यावरण परिस्थितियों को अपनाती है, जैसे कम बारिश, और पूरे वर्ष अधिक तापमान।

### 6.3.2 प्रजातीय विविधता

प्रजाति में विविधता का अर्थ है प्रजातियों के बीच अंतर (घरेलू और वन्य दोनों)। यह जैव विविधता का सबसे अधिक दिखाई देना वाला घटक है क्योंकि यह शब्द ''प्रजाति'' पर लागू होता है, जिसका शाब्दिक अर्थ है बाहर की ओर या दिखाई देने वाला रूप। यही कारण है कि हम एक खास क्षेत्र या वैश्विक स्तर पर प्रजातियों की संख्या के संदर्भ में जैविक विविधता का वर्णन करते हैं।

पृथ्वी पर विद्यमान (अर्थात् वर्तमान में मौजूद) होने वाली प्रजातियों के विभिन्न अनुमान हैं, जो लगभग 5 से 100 मिलियन के बीच हैं, किंतु लगभग 12.5 मिलियन का आंकड़ा सर्वाधिक व्यापक रूप से स्वीकार्य है। इनमें से लगभग 1.7 मिलियन प्रजातियों का अब तक वर्णन किया गया है।

केवल संख्याओं के संदर्भ में ही हमारी धरती पर कीट और सूक्ष्म जीव सबसे बड़ी संख्या में पाए जाने वाले जीव रूप हैं (बॉक्स 6.1)।

बॉक्स 6.1 : दुनिया में ज्ञात वनस्पति और जंतुओं की प्रजातियां

| | |
|---|---|
| | स्तनधारियों की 4,500 प्रजातियां |
| | पक्षियों की 10,000 प्रजातियां |
| | उभयचरों और सरीसृपो की 12,000 प्रजातियां |
| | मछली की 22,00 प्रजातियां |
| | अकशेरुकियों की 400,000 प्रजातियां (कीटों के अतिरिक्त) |
| | कीटों की 960,000 प्रजातियां, जिनमें से 600,000 भृंग है। |
| | पौधों की 270,000 प्रजातियां |
| | कवको की 70,000 प्रजातियां |
| | जीवाणुओं की 4,000 प्रजातियां |
| | विषाणुओं की 5,000 प्रजातियां |

## 6.3.3 पारितंत्र विविधता

पारिस्थितिक विविधता का अर्थ है विभिन्न प्रकार के पारितंत्रों के बीच विविधता। जंतुओं, पौधों और सूक्ष्म जीव की विभिन्न प्रजातियां आपस में और उनके भौतिक परिवेश (जैसे पानी या खनिज) से पारस्परिक क्रिया करती हैं। जीवों के समूह और उनके अजीवित परिवेश तथा उनके बीच की अंतः क्रियाएं, कार्यात्मक गतिशील और जटिल इकाइयां,

बनाते है जिन्हें पारितंत्र कहते हैं। इन प्रणालियों से जीवन की प्रक्रियाओं के रखरखाव में मदद मिलती है जो धरती पर जीवित रहने के लिए जरूरी हैं।

प्रजातियां पूरी दुनिया में एक समान रूप से वितरीत नहीं हैं। कुछ पारिस्थितिक तंत्र जैसे उष्ण कटिबंधी वन और प्रवाल भित्ति (coral reef) बहुत जटिल होते हैं और इनमें कई प्रकार की प्रजातियां पाई जाती है। अन्य पारितंत्र जैसे रेगिस्तान और ध्रुवीय क्षेत्रों में जैव विविधता कम होती है, किंतु ये समान रूप से महत्व रखते हैं।

ऐसा माना जाता है कि प्रजाति की विविधता और पारितंत्र का स्थायित्व तथा प्रत्यास्थता (अर्थात विघ्न का प्रतिरोध करने की क्षमता) के बीच एक सकारात्मक संबंध है।

एक पारितंत्र में अधिक विविधता का अर्थ है प्रजातियों तथा इनके बीच अधिक अंतः क्रियाएँ जो एक बड़ा खाद्य जाल बनाती है (चित्र 6.1क)। ऐसी स्थिति में एक प्रजाति के उन्मूलन से पारिस्थितिक तंत्र के संतुलन पर कम प्रभाव होगा। इसके विपरीत खाद्य–जाल में प्रजातियों की संख्या एक सरल पारिस्थितिक तंत्र में कम होती है (चित्र 4.1ख)। अतः किसी एक प्रजाति की हानि से स्वयं पारितंत्र की अखण्डता पर गंभीर परिणाम होंगे।

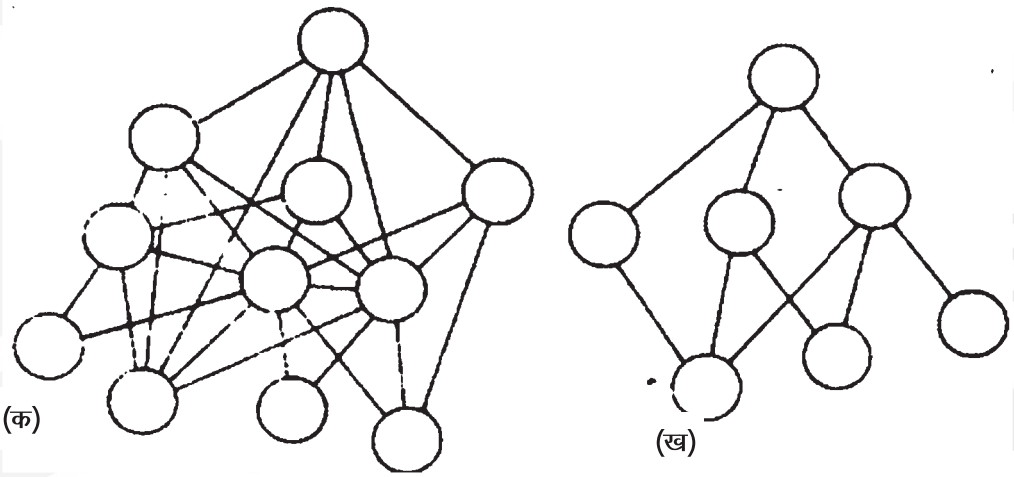


**चित्र 6.1 : इन दो चित्रों में पारिस्थितिक तंत्रों की तुलनात्मक तस्वीर दी गई है, जिसमें उच्च क) और अल्प ख) प्रजाति जैव विविधता दर्शाई गई है। क में जटिल सह संबंध देखें और देखें कि ख में केवल कुछ लिंक हैं। लिंक की बढ़ती हुई संख्या से पारिस्थितिक तंत्र को स्थायित्व मिलता है।**

## बोध प्रश्न 2

आनुवंशिक और प्रजातीय विविधता में अंतर लिखिए।

## 6.4 भारत के जैव-भौगोलिक क्षेत्र और इनकी जैव विविधता

देश को 10 जैव भौगोलिक क्षेत्रों में बांटा गया है : पार हिमालय, हिमालय, भारतीय रेगिस्तान, अर्द्ध शुष्क पश्चिमी घाट, दक्षिण प्रायद्वीप, गंगा के मैदान, पूर्वोत्तर भारत, द्वीप,

और तट (चित्र 6.2)। यह वर्गीकरण रोजर और पंवार द्वारा भारतीय वन्य जीवन संस्थान में किया गया है (1988) और इसका अधिकांशतः पालन किया जाता है। ये जैव भौगोलिक क्षेत्र क्या है? ये प्रमुख प्रजाति समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसके अलावा इनमें से प्रत्येक क्षेत्र भौतिक, जलवायु तथा ऐतिहासिक परिस्थितियों का एक विशेष सेट दर्शाता है। हिमालय और गंगा के मैदान दो आस पास के क्षेत्रों के उदाहरण है, किंतु ये आपस में बिल्कुल अलग हैं (तालिका 6.1)।

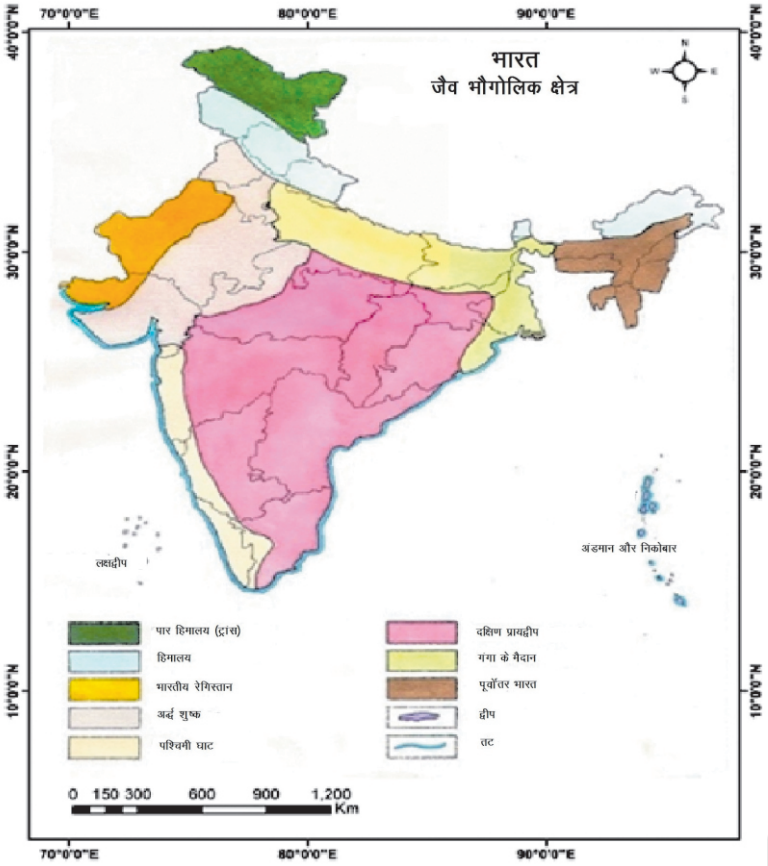


**चित्र 6.2: भारत के जैव भौगोलिक क्षेत्र। डब्ल्यू ए रोजर्स और एच एस पंवार, 1988 की ओर से। भारत में वन्य जीवन संरक्षित क्षेत्रफल नेटवर्क की योजना। खण्ड 1, पर्यावरण, वन एवं वन्य जीवन विभाग, भारत सरकार।**

## 6.4.1 क्षेत्र 1 : पार हिमालय (ट्रांस हिमालय)

**स्थानिक प्रजातिः** प्रजाति जो किसी विशिष्ट क्षेत्र में ही पाई जाती है जैसे *ऐज़ेडिरेक्टा इंडिका* (नीम) जो भारतीय उपमहाद्वीपीय क्षेत्र में स्थानिक है।

**संकटापन्न प्रजातिः** एक प्रजाति तब संकटापन्न होती है जब उसकी संख्या इतनी कम या उसका पर्यावास इतना छोटा हो कि यदि उसे पर्याप्त सुरक्षा न प्रदान की जाए, तो वह विलुप्त हो सकती है।

इस क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग 1,86,200 वर्ग कि. मी. है और इसमें मुख्य रूप से लद्दाख और लाहुल – स्पीति आते हैं। यह क्षेत्र भारत के अंदर के क्षेत्रफल में कहीं अधिक व्यापक है। यहां कि स्थलाकृति को विचार में लेकर यह क्षेत्र लगभग 2.6 मिलियन वर्ग कि. मी. हो जाता है और औसत समुद्र तल से उँचाई 4,500 और 6,000 के बीच हो सकती हैं।

### पार हिमालय क्षेत्र का वन्यजीवन

यह क्षेत्र अत्यंत भंगुर पारितंत्र दर्शाता है, क्योंकि यहां की जलवायु परिस्थितियां कठोर हैं और यहां की स्थलाकृति उपयुक्त नहीं है।

**स्थानिक प्रजातिः** प्रजाति जो किसी विशिष्ट क्षेत्र में ही पाई जाती है जैसे *ऐज़ेडिरेक्टा इंडिका* (नीम) जो भारतीय उपमहाद्वीपीय क्षेत्र में स्थानिक है।

**संकटापन्न प्रजातिः** एक प्रजाति तब संकटापन्न होती है जब उसकी संख्या इतनी कम या उसका पर्यावास इतना छोटा हो कि यदि उसे पर्याप्त सुरक्षा न प्रदान की जाए, तो वह विलुप्त हो सकती है।

लद्दाख और लाहुल – स्पीति की वनस्पति अधिकांशतः कहीं कहीं बिखरे हुए एल्पाइन स्टेपी हैं। इसके अलावा यहां कई स्थानिक प्रजातियां भी पाई जाती हैं। भारत के अंदर यह क्षेत्र पाकिस्तान और तिब्बत के साथ मिलकर दुनिया की सबसे अधिक वन्य भेड़ों और बकरियों के समुदाय का निवास है। यहां भेड़ों की 8 विशिष्ट प्रजातियां और उप प्रजातियां पाई जाती हैं।

चपटे पठार में विशिष्ट चरने वाले समुदाय पाए जाते हैं जो हैं जंगली याक, तिब्बती खच्चर, तिब्बती गजेल, आईबैक्स और तिब्बती एंटीलोप (देखें चित्र 6.4 क –ङ.)। इन शाकाहारियों के अलावा मांसाहारी जीवों का एक विशिष्ट समूह भी यहां पाया जाता है जिसमें हिम तेंदुओं, भारतीय भेड़िया, पलास की बिल्ली, लोमड़ी और अन्य छोटे जंतु आते हैं जैसे मारबल्ड पोल कैट, पिका और मार्मोट (देखें चित्र 6.5 क–घ)। इनमें से पलास की बिल्ली इस क्षेत्र की स्थानिक जीव हैं। यहां की झीलों और दलदली क्षेत्रों में भी विशेष प्रकार के पक्षी पाए जाते हैं जिसमें काली गर्दन वाले सुंदर सारस शामिल हैं, जो एक प्रवासी पक्षी है। यहां के पक्षी जगत सामूहिक रूप से पक्षी समूह बनाते हैं।

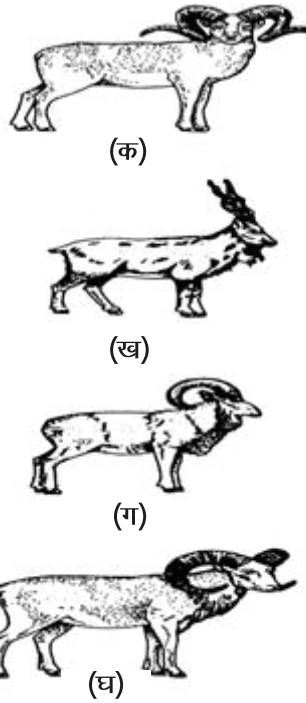


चित्र 6.3: पार हिमालयन क्षेत्र में पाई जाने वाली भेड़ प्रजातियां हैं, क) यूरियल (*ओविस ओरियंटेलिस*); ख) नयन (*ओविस अमॉन होडग्सोनिल*); ग) मार्को पोलो ग) (*ओविस अमॉन पॉली*); और घ) मर्खोर (*कापरा फैलकोनेरी*)।

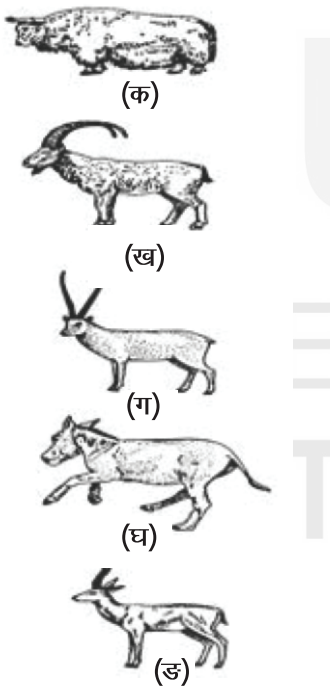


चित्र 6.4: पार हिमालयन क्षेत्र में पाई जाने वाली शाकाहारी प्रजातियां हैं, क) जंगली याक (*बॉस ग्रुनीएंस*); ख) गैजल चिंकारा (*गेजेला गेजेला*); ग) तिब्बती खच्चर (*इक्वास हिमिनौस*); घ) इबैक्स (*कापरा इबैक्स*); और ङ) तिब्बती एंटिलोप (*पैंथोलोप्स हेडग्सोनी*)।

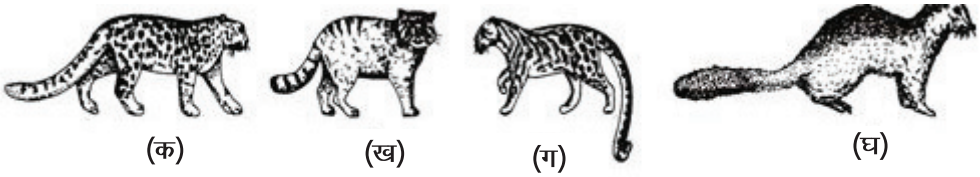


चित्र 6.5: पार हिमालय क्षेत्र में पाए जाने वाले कुछ मांसाहारी, मार्मोट। (*मार्मोट कौडेट*)।

## 6.4.2 क्षेत्र 2 : हिमालय

भारत की हिमालय पर्वत श्रृंखला पूर्व से पश्चिम तक लगभग 2,000 कि.मी. में तक फैला है।

### हिमालय क्षेत्र का वन्य जीवन

हिमालय के क्षेत्र में पर्यावास और प्रजाति विविधता के संदर्भ में भरपूर जीव जंतु पाए जाते हैं।

आइए सबसे पहले हिमालय की तुंग और देशांतरीय परास में पाए जाने वाले वन्य जीवन पर एक नजर डालें। ये हैं :

i) **निचली उपोष्णकटिबंधीय तलहटी** :यहां मिले जुले पर्णपाती समुदाय के साथ चीड़ पाईन और बैन ओक के पेड़ पाए जाते हैं। (चित्र 6.6 क)

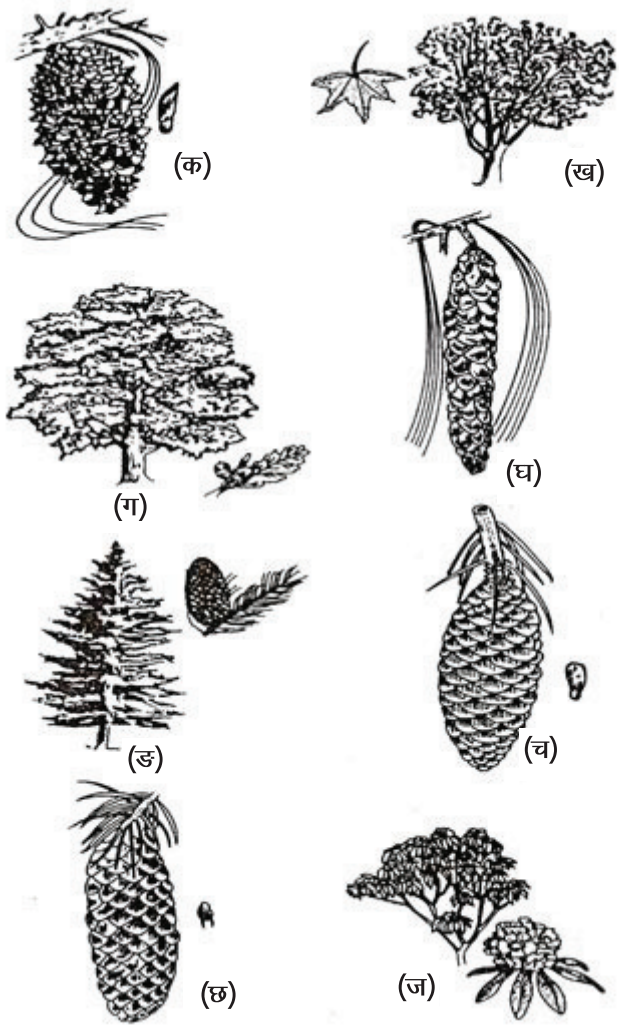


चित्र 6.6: हिमालय वनस्पति के कुछ प्रतिनिधि सदस्य क) चीड़ पाइन (*पाइनस रॉक्सबर्घी*) एक कोन ख) मैपल (*एसर* प्रजाति) ग) ओक (*क्यूरकस* प्रजाति) घ) ब्लू पाइन (*पाइनस वॉलिचैना*) एक कोन, ङ) फर (*एबिस* प्रजाति) पेड़ और एक कोन, च) स्प्रुस (*पीया स्मिथियाना*) जो पश्चिमी हिमालय में पाए जाते हैं, एक कोन छ) स्प्रूस (*पीया स्पिनुलोसा*) पूर्वी हिमालय से, एक कोन ज) रोडो डेंड्रोन (*रोडो डेंड्रोन* प्रजाति)।

ii) **शीतोष्ण क्षेत्र** :ये 3,500 मीटर के नीचे पाए जाते हैं। इस क्षेत्र में मिली जुली वनस्पति के साथ मैपल के जंगल (चित्र 6.6ख) और अखरोट, मोरु और ओक (चित्र 6.6ग) एवं ब्लू पाइन, फर और स्प्रूस जैसे अनेक शंकुधारी वृक्ष पाए जाते हैं (चित्र 6.6 घ–छ)

iii) **उप–एल्पाइन क्षेत्र** इस क्षेत्र में बिर्च और रोडोडेंड्रोंस (चित्र 6.6ज) की वन्य और गुल्म वनस्पति पाई जाती है। यह कई प्रकार की जड़ी बूटियों के साथ घास के मैदान में फैले होते हैं।

iv) **पश्चिमी क्षेत्र** : यहाँ देवदार (चित्र 6.7) और नीले पाइन के व .क्ष होते हैं। यह अपेक्षाकृत सूखा इलाका है।

v) **मध्य क्षेत्र** : यहां बड़े शाकाहारी जंतुओं की कम संख्या देखी जाती है। यहां आईबैक्स, मर्खोर और हंगुल की संख्या बहुत कम होती है।

vi) **पूर्वी क्षेत्र** : मिश्मी टेकिन, एक शाकाहारी जंतु यहां पाया जाता है (चित्र 6.8)। इस इलाके में ऊंचे पेड़ों की कतारें पाई जाती है और अधिक ऊंचाई पर रहने वाले जंगली जानवरों को ऊंचाई पर रहने की सुविधा मिलती है।

**चित्र 6.7: देवदार, *सेड्रस देओदरा* हिमालय के पश्चिमी क्षेत्रों में बहुलता से पाया जाता है, क, ख, ग) ऑर्किड्स पूर्वी हिमालय क्षेत्र की प्रमुख वनस्पति हैं।**

**चित्र 6.8: पूर्वी हिमालय की कुछ जंतु प्रजातियां, टेकीन (*बुर्डोकास टेक्सिकलर*)।**

यहां के पेड़ पौधों और जंतुओं के लगभग सभी समूहों में स्थानिकता पाई जाती है। स्थानिक प्रजातियों के अलावा यहां कुछ संकटापन्न प्रजातियां भी पाई जाती हैं।

## 6.4.3 क्षेत्र 3 : भारतीय रेगिस्तान

यह क्षेत्र देश के पश्चिमी भाग में स्थित है और इसे थार मरुस्थल के नाम से भी जाना जाता है। यह गुजरात और पश्चिम राजस्थान को घेरता है। पंजाब और हरियाणा के

हिस्से एक समय इस रेगिस्तान का हिस्सा होते थे, किंतु सिंचाई के साथ खेती के कारण यहां परिस्थिति बदल गई है।

### भारतीय रेगिस्तान का वन्य जीवन

रेगिस्तानी क्षेत्र के वन्य जीवन खास होते हैं लेकिन इसलिए नहीं कि यहां इनके घनत्व में बहुत अधिक विविधता होती है, बल्कि इसका कारण रेगिस्तान की परिस्थितियों के साथ इनके अति असाधारण रूप से होने वाले पारिस्थितिक बदलाव हैं। इनमें से कई प्रजातियां थार रेगिस्तान की स्थानिक प्रजातियां होती है। रेगिस्तानी लोमड़ी, रेगिस्तानी बिल्ली (चित्र 6.9 क–घ), हुबारा बस्टर्ड और कुछ सैंड ग्राउस प्रजातियां थार क्षेत्रफल के अंदर सीमित होती है। भारत के रेगिस्तानों में *प्रोसोपिस सीनेरेरिया, सालवाडोरा ओलिओइड्स* सामान्य तौर पर पाए जाने वाले पेड़ हैं।

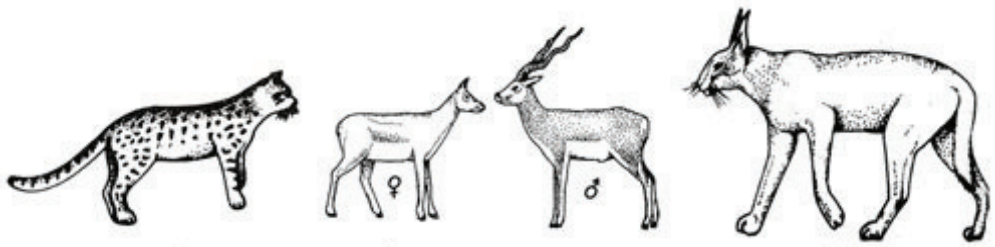

(क) (ख) (ग) (घ)

चित्र 6.9: रेगिस्तानी बिल्ली (*फेलिस लिबीका*)।

## 6.4.4 क्षेत्र 4 : अर्द्ध शुष्क

इस क्षेत्र में लगभग 508,000 वर्ग कि. मी. के क्षेत्रफल में हमारे देश के कुल क्षेत्रफल का 15 प्रतिशत हिस्सा आता है। यहां घास की अनेक प्रजातियां और कुछ स्वादु झाड़ियां पाई जाती है जो वन्य जीवन की अनेक प्रजातियों के लिए रूचिकर है।

### अर्द्धशुष्क क्षेत्र का वन्य जीवन

इस क्षेत्र में पश्चिमी एशिया के साथ मजबूत जैविक संबंध दिखाई देते हैं, जो प्रधान रूप से पाकिस्तान, ईरान, मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका के साथ हैं। यहां पाए जाने वाले कई पेड़ों में अफ्रीका के साथ बंधुता दिखाई देती है, उदाहरण के लिए *अकेशिया* प्रजाति (देखे चित्र 6.10)। यहां पाए जाने वाले जंतुओं में बड़े लर्बी वर्स – ब्लैकबक, चौसिंगा, गैजले और नीलगाय शामिल हैं (चित्र 6.11)।

(क) (ख)

(ग) (घ) (ङ)

चित्र 6.10: अर्धशुष्क क्षेत्र के पौधे, *एकेशिया ल्यूकोफ्लोई* (रोंज)।

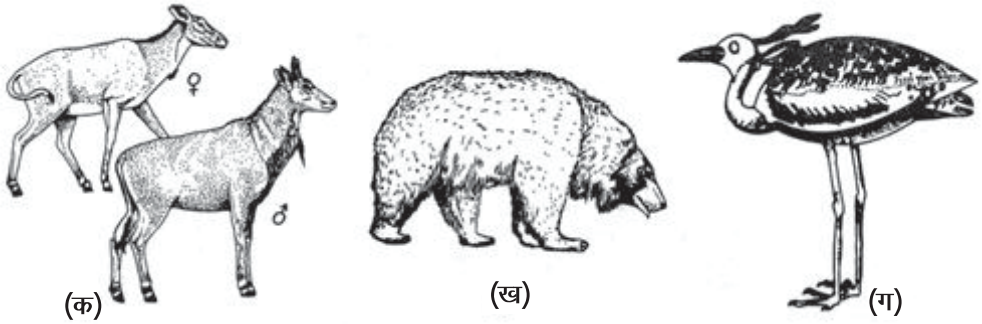

(क) (ख) (ग)

चित्र 6.11: अर्धशुष्क क्षेत्र के कुछ जीव, क. नील गाय (*बोसेलेफस ट्रेगोकैमेलस*), मादा (क) और नर (ख) स्लोथ बीयर (*मैलुरसस अर्सिमस*), और ग) लेसर फ्लोरिकैन (*साइफियोटाइड इंडिका*)।

## 6.4.5 क्षेत्र 5 : पश्चिमी घाट (जैव विविधता हॉट स्पॉट)

पश्चिमी घाट भारत के प्रमुख उष्णकटिबंधी सदाबहार वन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पश्चिमी घाट का कुल क्षेत्रफल लगभग 160,000 वर्ग कि. मी. है। पश्चिमी में, इस क्षेत्र को तट घेरते हैं तथा पूर्व में इसकी सीमा दक्षिणी प्रायद्वीप क्षेत्र से जुड़ती है। इस उष्णकटिबंधी सदाबहार वन से इस पर्वतीय क्षेत्र के कुल क्षेत्रफल का लगभग एक तिहाई हिस्सा ढका होता है। हाल के वर्षों में इस क्षेत्र का वनावरण काफी हद तक कम हो गया है और इस क्षेत्र को लेकर संरक्षण की चिंताएं बढ़ गई है, इसका कारण यहां कि असाधारण जैविक समृद्धि है। भारत के स्थानिक वनस्पति का लगभग दो तिहाई हिस्सा इस क्षेत्र में सीमित है। जबकि कई प्रजातियों की संभाव्यता का दोहन अभी करना शेष है। विविध जैविक समुदायों को आश्रय देने के अलावा इस क्षेत्र के जंगल जल चक्र के रखरखाव में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**पश्चिमी घाटों में खास तौर पर पाई जाने वाली जानी मानी प्रजातियों में निम्नलिखित शामिल हैं :**

**प्राइमेटस** –नीलगिरि के लंगूर और सिंह पुच्छी वानर (चित्र 6.13ख, ग)

रोडेंट्स –*प्लेटेकोथोमिस*, स्पाइनी डोर्माउस

गिलहरियां –*राटुफा इंडिका* की कई उपप्रजातियां महाराष्ट्र, मैसूर, मालाबार और तमिलनाडु के घाटों में अलग अलग रूप में पाई जाती है। ग्रिज़ल गिलहरी तमिलनाडु के जंगल में दो सूखे स्थानों तक सीमित होती है।

मांसाहारी – दक्षिणी सदाबहार जंगलों में मालाबार सिवेट, उत्तरी पर्णपाती जंगलों में लाल धब्बों वाली बिल्ली।

खुरदार – नीलगिरि से अगस्त्यमलय पर्वतीय घास के मैदानों में नीलगिरी ताहर (चित्र 6.13 घ)।

धनेश –मालाबार ग्रे धनेश (हार्नबिल) (चित्र 6.13ङ.)।

उपरोक्त स्थानीय प्रजातियों के अलावा, अन्य प्रजातियां पाई जाती हैं : बाघ, तेंदुआ, ढोले (चित्र 6.13च), स्लोथ भालू, भारतीय हाथी और गौर (चित्र 6.13छ),

(क)

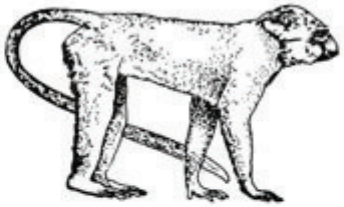
(ख)

(ग)

(घ)

(ङ)

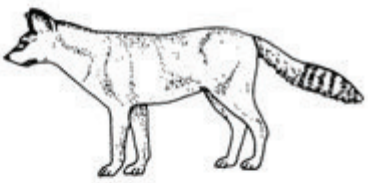
(च)

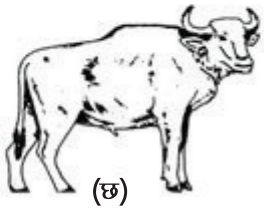
(छ)

चित्र 6.13: पश्चिमी घाट के जीव तत्व, क. स्वैम्प डीयर (*सर्वस डुवाउसेली*), ख) नील गिरी लंगूर (*प्रेसबाइटिस जोनी*), ग) लॉयन – टेल्ड मैकाक (*मैकाक साइलेनस*), घ) नीली गिरी तहर (*हेमिट्रेगस हाइलोक्रियस*), और ङ) मालाबार ग्रे हॉर्नबिल (*टोकस बिरोस्ट्रिस*), च) ढोल (*क्यूओन एल्पाइनस*), और छ) गौर (*बॉस गौरस*)।

चित्र 6.12: *मेरिस्टिका* की टहनी एक फल के साथ।

चित्र 6.14: दक्षिणी प्रायद्वीप में पाए जाने वाले चीतल (*एक्सिस एक्सिस*)।

## 6.4.6 क्षेत्र 6 : दक्षिण प्रायद्वीप

इस क्षेत्र में भारत का सबसे बड़ा क्षेत्रफल शामिल है, जो कुल भूमि का लगभग 43 प्रतिशत और लगभग 1,421,000 वर्ग मीटर क्षेत्रफल पर फैला है। इस क्षेत्र के बड़े हिस्से में मनुष्य बहुत अधिक संख्या में रहते हैं, फिर भी कुछ वन क्षेत्र मौजूद है, खास तौर पर मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और उड़ीसा में।

इस क्षेत्र में पर्णपाती वन, कांटेदार जंगल और विखण्डित झाड़ियां पाई जाती हैं। यहां पूर्वी घाट में अर्द्धसदाबहार जंगलों के छोटे इलाके, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु के मैदानों के तटीय किनारों पर सूखे सदाबहार जंगलों तथा कांटेदार झाड़ियां पाई जाती हैं।

जंतु प्रजातियां इस पूरे क्षेत्र में बहुत अधिक फैली हैं, उदाहरण के लिए चीतल (चित्र 6.14), साम्बर, नीलगाय, चौसिंहा, बार्किंग डीयर और गौर। कुछ प्रजातियां जैसे ब्लैक बक खुले सूखे क्षेत्रों तक सीमित होते हैं। यहां छोटी, विशिष्ट प्रजातियां भी पाई जाती हैं, उदाहरण के लिए हाथी (बिहार – उड़ीसा, और कर्नाटक – तमिलनाडु) और जंगली भैंसे (उड़ीसा, मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र के संगम पर छोटे क्षेत्र में)।

## 6.4.7 क्षेत्र 7 : गंगा के मैदान

इस क्षेत्र को दुनिया का सबसे अधिक उपजाऊ क्षेत्र माना जाता है और यह घनी तथा बढ़ती हुई मानव आबादी को आधार प्रदान करता है। यह लगभग 359,400 वर्ग कि. मी. का क्षेत्रफल है। इस अधिकांश इलाके में कोई मूल वनस्पति अब नहीं पाई जाती, क्योंकि इस क्षेत्र के अधिकांश हिस्सों में खेती की जाती है।

**गंगा के मैदान का वन्य जीवन**

नील गाय, ब्लैकबक और चिंकारा की छोटी आबादियां पश्चिमी क्षेत्रों के घनी खेती के इलाकों में अब भी पाई जाती हैं।

नमी युक्त क्षेत्र और नदियों में – मगरमच्छ और घड़ियाल की आबादी भी पाई जाती है। यहां गंगा की डॉल्फिन (चित्र 6.15) और 20 से अधिक प्रजातियों वाले मीठे पानी के कछुओं की बड़ी संख्या पाई जाती है।

## 6.4.8 क्षेत्र 8 : पूर्वोत्तर भारत

**चित्र 6.15: गंगा के मैदान में पाई जाने वाली गंगा की डोल्फिन (*प्लेटेनिस्टा गैंगेटिका*)।**

पूर्वोत्तर भारत से भारत, भारत – मलायन और भारत – चीनी क्षेत्र के बीच संक्रमण क्षेत्र का प्रतिनिधित्व होता है और यह भारत के प्रायद्वीप के साथ हिमालय पर्वत के संगम का बिंदु भी है। यह भारतीय उप महाद्वीप के सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक है जहां भरपूर जैविक विविधता और अनेक स्थानिक प्रजातियां इस क्षेत्र में पाई जाती हैं।

इस क्षेत्र की ब्रह्मपुत्र घाटी में अनोखी प्राकृतिक वनस्पतियां हैं – दलदली क्षेत्र, घास के मैदान और घने जंगल तथा वन। यहां के जंतुओं में दरियाई घोड़ा, भैंस, स्वैम्प डीयर, हॉग डीयर, पिग्मी हॉग और हिस्पीड हेयर शामिल हैं। यहां हाथियों की भी सबसे बड़ी आबादी पाई जाती है। यह वॉटर फोल और अन्य पक्षियों के लिए उड़ने का रास्ता भी देती है जो उपमहाद्वीप की गर्मी और अपने आश्रय साइबेरिया तथा चीन के बीच यात्रा करते हैं।

## 6.4.9 क्षेत्र 9 : द्वीप

इस क्षेत्र में हम बंगाल की घाटी में अण्डमान और निकोबार द्वीप समूहों तथा अरब सागर में लक्षद्वीप के बारे में चर्चा करेंगे। अण्डमान और निकोबारद्वीप उत्तर दक्षिण अभिविन्यास के साथ 348 द्वीपों का एक लंबा समूह है।

इस क्षेत्र में विशेष प्रकार के वनस्पति और जंतु जीवन उच्च स्तर की स्थानिकता दर्शाते हैं। इन जंतुओं को इन द्वीपों में स्तनधारी जंतु समूह के साथ देखा जा सकता है। इसका कारण अधिकांशतः अण्डमान और निकोबार द्वीपों का अलग हो जाना और द्वीप का छोटा आकार होने से है। स्तनधारियों में कृन्तक और चमगादड़ों की प्रजातियों का प्रभुत्व है।

पादप : भारत में पाए जाने वाले 15,000 पुष्पाधारी पादपों की प्रजातियों में से 2,200 प्रजातियां इन द्वीपों में पाई जाती है (दो प्रजातियां चित्र 6.16 में दिखाई गई है)। इनमें से 200 से अधिक पूर्ण रूप से स्थानिक हैं।

### 6.4.10 क्षेत्र 10 : तट

भारत में लगभग 5689 कि. मी. लंबा तट है (श्री निवासन 1969)। पश्चिम दिशा में अरब सागर, गुजरात, महाराष्ट्र, गोआ, कर्नाटक और केरल राज्यों के तटों को छूता है। पूर्व दिशा में बंगाल की खाड़ी, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु राज्यों में सुंदर वन के तट हैं। भारतीय प्रायद्वीप का दक्षिणी उच्चांतरीप(तमिलनाडु का दक्षिणी हिस्सा का समुद्र तट) जहाँ मन्नार की खाड़ी और हिंद महासागर से सटा हुआ है।

**तटों का वन्य जीवन**

तटों का भूगर्भ विज्ञान अत्यंत विविध है और तद्नुसार 5 मुख्य समुदायों का वर्णन किया गया है :

क) मैंग्रोव –इसमें समुद्र की ओर से भूमि ओर के क्षेत्रों पर ज्वारनदमुख, लैगून और डेल्टा के विविध समुदाय होते हैं।

ख) रेतीले किनारे सहित उठे हुए समुद्र तट और विशिष्ट पादप समुदाय जैसे *कैसुआरीना–कैलोफिल्म–पेंडेनस*।

ग) पंक मैदान जिनमें अनुक्रमिक चरणों के परास से संपूर्ण स्थलीय वनस्पति का विकास होता है।

घ) उठे हुए कोरल और पथरीली तट रेखा।

ङ) समुद्री आव तबीजी।

दिलचस्प तटीय वन्य जीवन प्रजातियों में से कुछ प्रकार है : डुगोंग; हम्प – बैक डोल्फिन जो ज्वारनदमुख के पास गंदे पानी में पाई जाती है, ज्वारनदमुख पर या नमकीन पानी के घड़ियाल, ओलिव रिडली, ग्रीन; हॉक्स बिल; लैदर और लोगरहैड सी टर्टल; ज्वारनदमुख पर मिलने वाले कछुए – सुंदर वन के *बाटा गुर बास्कर* और बड़े नरम कवच वाले ज्वारनदीय कछुए; उत्कल बंगाल तट की मछली *पैलोचिल बिर्बोनी*– मड स्कीपर या अर्द्ध स्थलीय गोबिस, एनिमोन के साथ जुड़े छोटे केंकड़े, मैंग्रोव के पक्षी समुदाय, मड फ्लैट और लैगून। मैंग्रोवों के ऊंचे हिस्सों में धब्बेदार डीयर, सुअर, मॉनिटर लिजार्ड, बंदर और सुंदरवन के बाघ पाए जाते हैं।

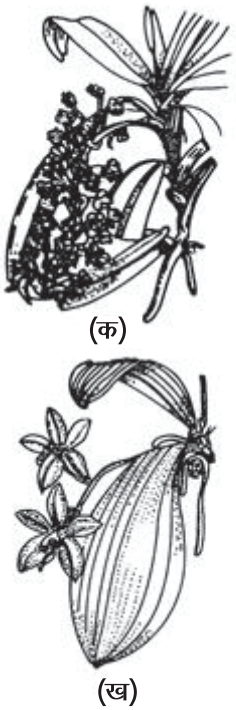

(क) (ख)

**चित्र 6.16: अण्डमान और निकोबार द्वीपों की दो ऑर्किट प्रजातियां। क) *ऐरिडेस एमेरिसी*, ख) *पेलिनोप्सिस स्पेसिओसा*।**

## 6.5 जैव विविधता हॉट स्पॉट

**हॉट स्पॉट ऐसे क्षेत्र है जहां प्रजातियां भरपूर है, उच्च स्थानिकता है और जो लगातार खतरे में है।**

मेयर्स (1988) ने दुनिया भर में 18 क्षेत्रों या ''हॉट स्पॉट'' को पहचाना है। दिलचस्प रूप से इन क्षेत्रों में लगभग 50,000 स्थानिक पादप प्रजातियां या विश्व की पादप प्रजातियों का 20 प्रतिशत हिस्सा केवल 746,000 वर्ग कि. मी. में या धरती की कुल सतह के केवल 0.5 प्रतिशत क्षेत्रफल में पाया जाता है। विश्व संरक्षण निगरानी केंद्र, यूके द्वारा आगे अध्ययन कर के 21 ''हॉट स्पॉट'' को पहचाना गया। कंसर्वेशन इंटरनेशनल द्वारा हाल में किए गए एक अध्ययन में, जो मेयर्स के कार्य को आगे बढ़ाता है, 34 वैश्विक ''जैव विविधता हॉट स्पॉट'' पहचाने गए हैं। इन 34 हॉट स्पॉट में धरती का केवल 1.4 प्रतिशत हिस्सा है, किंतु यहां सभी संवहनी पादपों की लगभग 44 प्रतिशत संख्या और कशेरुकियों की 35 प्रतिशत (मछलियों के अलावा), तथा संकटापन्न प्राइमेट 96 प्रतिशत संख्या यहां पाई जाती है। दुनिया के 34 हॉट स्पॉट में से चार भारत वाले में पाए जाते हैं जो पड़ोसी देशों तक आगे बढ़ते हैं – पश्चिमी घाट / श्री लंका, भारत –बर्मा क्षेत्र (पूर्वी हिमालय सहित) हिमालय, निकोबार समूह के द्वीपों को आच्छद करता हुआ सुन्दालैन्ड तक हैं। ये क्षेत्र वनस्पतियों की संपदा और स्थानिकता से भरपूर है, बल्कि फूल वाले पौधों सरीसृप, उभयचरों, स्वैलो टेल्ड तितली और स्तनधारी से भरपूर भी है।

एक स्थानिक प्रजाति किसी एक क्षेत्र में प्रतिबंधित होती है जो और कहीं नहीं पाया जाता है।

**हरित राष्ट्र**
पेड़–पौधों, तथा जीव–विज्ञान की पाठ्य पुस्तक में वर्णित कोई भी कीट जीव–स्रोत के रूप में योग्य हैं। विशाल जैव संसाधन वाले देशों को मेगा डाइवर्स कहा जाता है।

**बहु जैव विविधता वाले देश**
बहु जैव विविधता वाले देश जिनमें विशाल जैव संसाधन होते हैं, वे बहु विविध कहलाते हैं। अट्ठारह राष्ट्र जो विश्व के 70 प्रतिशत जैव संसाधनों को नियंत्रित करते हैं वे है भारत, चीन, जायरे, इंडोनेशिया, कोलंबिया, मेक्सिको, इक्वेडोर, केन्या, पेरू, वैनेन्जुला, कोस्टारिका, बोलिविया, मलेशिया, मेडागास्कर, फिलिपिन्स, दक्षिणी अफ्रीका तथा कांगो। राष्ट्रों का चयन प्रजाति की समृद्धि तथा प्रजाति की स्थानिकता पर निर्भर करता है।

कई बार कुछ देशों में अन्य की तुलना में जैव विविधता अधिक होती है। सामान्य तौर पर आर्थिक रूप से दुर्बल विकासशील देशों के उष्ण कटिबंधी क्षेत्र शीतोष्ण क्षेत्रों वाले विकसित देशों की तुलना में जैव विविधता से भरपूर होते हैं।

कुछ उष्ण कटिबंधी महासागर के द्वीपों में उनके अलग होने के कारण अपेक्षाकृत कम प्रजातियां होती है, किंतु आम तौर पर इनमें स्थानिक प्रजातियों की संख्या अधिक होती है। मॉरिशस में 878 उच्चतर पादप प्रजातियों का मूल वनस्पति समूह पाया जाता है, जिसमें से 329 स्थानिक हैं।

## 6.6 भारत : एक बहु जैव विविधता वाला देश

### भारत एक बहुजीव विविधता वाला देश क्यों है?

- 34 वैश्विक जैव विविधता वाले हॉट स्पॉट की सूची में से 4 हॉट स्पॉट को मेयर्स द्वारा भारत और उसके पड़ोसी देशों में रखा गया है।
- भारतीय जैव विविधता की स्थानिकता बहुत उच्च है। देश के लगभग 33 प्रतिशत वनस्पति देश के लिए स्थानिक हैं। 49,219 पादप प्रजातियों में 5150 स्थानिक है और 47 फैमिली के तहत 141 जेनेरा में बांटी गई है, जो विश्व के अभिलेखित वनस्पति जगत का लगभग 30 प्रतिशत हैं।
- भारत में 26 मान्यता प्राप्त स्थानिक केंद्र हैं, जो पहचान करने योग्य और अब तक वर्णित पुष्प वाले सभी पादपों में से लगभग एक तिहाई का घर है।
- **भारत में दो प्रमुख क्षेत्र है, जिन्हें पेलिआर्कटिक और इंडो–मलायन कहते हैं तथा** तीन बायोम है अर्थात उष्ण कटिबंधी आर्द्र जंगल, उष्ण कटिबंधी पर्णपाती जंगल और गर्म रेगिस्तान/अर्ध रेगिस्तान।
- भारत में 10 भूगर्भीय क्षेत्र हैं।
- भारत कृष्ट पौधों के उद्भव के 12 केंद्रों में से एक है।

## बोध प्रश्न 3

किन मापदंडो के कारण भारत बहु जैव विविधता वाले देशों की सूची में रखा गया है।

# 6.7 जैव विविधता के उपयोगिता मूल्य

जैव विविधता के महत्व के बावजूद, जैव विविधता के महत्व या मूल्य का निर्धारण जटिल है और आम तौर पर यह विवाद का विषय होता है। इसका प्रायः कारण यह तथ्य है कि जैव विविधता को दिया गया महत्व अंतर निर्हित मानव मूल्यों में प्रदर्शित होता है और **ये मूल्य समाज और व्यक्ति दोनों के बीच बहुत भिन्न जाते हैं।**

इस इकाई में हम अप्रत्यक्ष मूल्यों या सेवाओं के उप समूह के रूप में आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और सौंदर्य मूल्यों को शामिल करते हैं, क्योंकि ये हमारे जीवन को समृद्ध बनाकर सेवाएं प्रदान करते हैं।

**टिप्पणी** : कुछ लेखक आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और सौंदर्य हैं और कुछ गैर उपयोग मूल्यों को उन सेवाओं से अलग रखना चाहते हैं बुनियादी उत्तर जीविता की जरूरते प्रदान करते हैं, जैसे कि हवा जिससे हम सांस लेते हैं।

विविधता के मूल्यों का वर्गीकरण आपको आसान रूप में समझने के लिए कुंजी के रूप में नीचे दिया गया है।

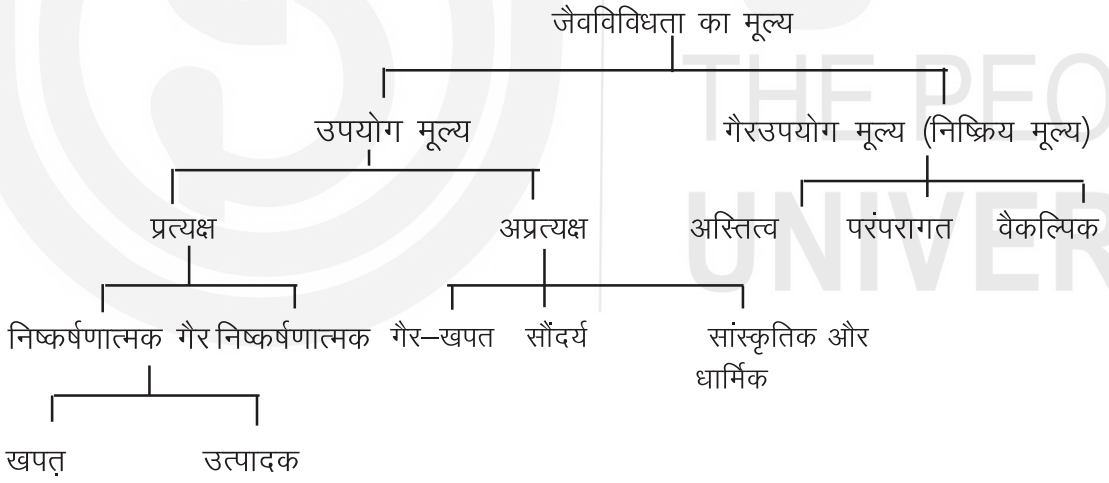


## 6.7.1 प्रत्यक्ष उपयोगिता मूल्य

प्रत्यक्ष उपयोग के मूल्य वे हैं, जिनके लिए वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप से सुनिश्चित किया जाता है, उदाहरण के लिए खाद्य और इमारती लकड़ी। जैविक विविधता के घटकों के व्यापक परास का रखरखाव प्रत्यक्ष उपयोग का हो सकता है, खास तौर पर कृषि, दवा और उद्योग के क्षेत्र में। प्रत्यक्ष उपयोग में जंगलों, आर्द्र भूमि और अन्य पारिस्थितिक प्रणालियों को शामिल किया जा सकता है जहां से इमारती लकड़ी निकाली जाती है, गैर इमारती उत्पादों का संग्रह किया है, मछली पकड़ने आदि का कार्य किया जाता है। प्रत्यक्ष उपयोग मूल्यों का महत्त्व **निष्कर्षणात्मक उपयोग** के कारण हो सकता है, जहां संसाधनों का निष्कर्षण या खपत की जाती है या **गैर निष्कर्षणात्मक उपयोग** के कारण हो सकता है, जब इन संसाधनों का निष्कर्षण या निकास नहीं किए जाते हैं,

जिन्हें उपयोग किया जाता है (उदाहरण के लिए पक्षी देखना, और पारितंत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान)।

## 6.7.2 अप्रत्यक्ष उपयोगिता मूल्य

अप्रत्यक्ष मूल्य उन सेवाओं के लिए होता है जो खपत के मदों को आधार देती हैं। आप इस भाग में विभिन्न अप्रत्यक्ष उपयोग मूल्यों के बारे में पढ़ेंगे।

### गैर खपत मूल्य

यह प्रकृति की सेवाओं से अधिक संबंधित है, जो समाज कल्याण में योगदान के साथ पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को भी बढ़ावा देती है, जिनके बिना हमारा ग्रह (पृथ्वी) रहने योग्य नहीं होगा।

### सौंदर्य मूल्य

जैव विविधता के सौंदर्य पक्षों की प्रशंसा उन लोगों में झलकती है जो अपने घर के बगीचे का रखरखाव करते हैं जो लोग राष्ट्रीय पार्क, वनस्पति तथा जंतु उद्यान जलजीवशाला, और ऐसे स्थानों पर जाते हैं जहां वे प्राकृतिक दृश्यावली का अनुभव कर सकता है या विविध प्रजातियों को देख सकते है।

### सांस्कृतिक और धार्मिक मूल्य

दुनिया की सभी संस्कृतियों में प्रजाति और प्रकृति ने कई गीतों को प्रेरणा दी है, इनके साथ अंध विश्वासी मान्यताएं, कहानियां और लोक कथाएं जुड़ी है, इनके साथ कई नृत्य और नाटक, कविताएं, पारंपरिक दस्तकारी, स्थानीय और राष्ट्रीय व्यंजन, स्थानीय रीति–रिवाजों, स्थानों के नाम और यहां तक कि परिवार के नाम करण की विधि को भी प्रेरणा मिली है। मानव समाज की जैव विविधता का सांस्कृतिक मूल्य का आम तौर पर जीवन के रूपों के लिए आदर या जैव विविधता के घटकों के प्रतीक के रूप में वर्णन किया जाता है। कुछ देशों में बाघ, शेर, छिपकली, कछुए और गैर धार्मिक तथा आध्यात्मिक मान्यताओं के प्रतीक हैं। उदाहरण के लिए, हनुमान लंगूर (*सेम्नोपिथेकस एंटेलस*) जिसे भारत में पवित्र माना जाता है।

### नैतिक मूल्य

जैव विविधता का नैतिक मूल्य स्वयं अपने लिए जैव विविधता के आंतरिक मूल्य पर प्रकाश डालता है और यह बड़ी संख्या में मानव समुदायों द्वारा खोजी गई प्रजातियों की विविध आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक उपयोगिता से स्वतंत्र है। इसमें इस तथ्य को रेखांकित किया गया है कि मनुष्य उन लाखों प्रजातियों में से केवल एक है जो धरती पर निवास करते हैं, जबकि प्रत्येक प्रजाति अपने आप में विशिष्ट है और मानव हस्तक्षेप के बिना विकास की प्रक्रिया का परिणाम है, अतः प्रत्येक प्रजाति को अस्तित्व का प्राकृतिक अधिकार प्राप्त है।

## 6.7.3 गैर उपयोगिता मूल्य

इन वस्तुओं / जीवों / इकाइयों के लिए मूल्य – जिन्हें हम उपयोग नहीं करते किंतु यदि ये अनुपस्थित हो जाए तो हम इन्हें खोया हुआ मानते हैं। इनमें **संभावित या वैकल्पिक मूल्य, पारंपरिक मूल्य** और **अस्तित्व मूल्य** शामिल हैं।

- **वैकल्पिक उपयोग के मूल्य**

  **वैकल्पिक मूल्य आम तौर पर भविष्य के संभावित उपयोग के साथ जुड़े है।**

  तद्नुसार एक व्यक्ति को इस आशा के साथ जैव विविधता का संरक्षण करना चाहिए कि इसे भविष्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से एक आनुवंशिक सामग्री के स्रोत के रूप में, औषधि उपयोग, फसल संवर्धन आदि के लिए उपयोग किया जा सकता है।

- **अस्तित्व मूल्य**

  जैविक विविधता के घटकों के लिए गैर उपयोग अस्तित्व मूल्य भी हो सकते हैं, जिसका कारण पूरी तरह जैव विविधता पर आधारित मूल्य होते हैं जो इसके निरंतर अस्तित्व से जुड़े होते हैं, चाहे यह कभी इस्तेमाल किया जाएगा या नहीं।

## बोध प्रश्न 4

जैव विविधता के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष उपयोग मूल्यों की चर्चा किजिए।

## 6.8 सारांश

आइए हमने अब तक जो सीखा है,उसे दोहरा लें:

- जैविक विविधता शब्द को थोमस लवजोय ने 1980 में इस्तेमाल किया और जैव विविधता शब्द ई. ओ. विल्सन द्वारा इस्तेमाल किया गया। जैव विविधता विभिन्न पारितंत्रों में मौजूद जीवों के बीच सापेक्ष विविधता का मापन है। कुल मिलाकर जैव विविधता एक क्षेत्र के जीनों, प्रजातियों तथा पारितंत्रों का योग है।
- विविधता के तीन स्तर हैं अर्थात **आनुवंशिक, प्रजाति** और **पारितंत्र।** ये सभी स्तर पारस्परिक क्रिया करते हैं और अन्य को प्रभावित करते हैं।
- आनुवंशिक विविधता द्वारा एक दी गई प्रजाति के जीवों के बीच अंतर दर्शाया जाता है। आनुवंशिक विविधता प्रजातियोंको बदलती हुई परिवेश परिस्थितियों के लिए अनुकूलित करने देती है।
- प्रजाति विविधता जैव विविधता का सबसे अधिक दिखाई देने वाला घटक है। इसका अर्थ है प्रजातियों के बीच भिन्नता। दुनिया में लगभग 12.5 मिलियन प्रजातियां हैं, जिनमें से 1.7 मिलियन प्रजातियों का वर्णन किया गया है।
- देश को 10 जैव भौगोलिक क्षेत्रों में बांटा गया है : पार हिमालय, हिमालय, भारतीय रेगिस्तान, अर्द्ध शुष्क पश्चिमी घाट, दक्षिण प्रायद्वीप, गंगा के मैदान, पूर्वोत्तर भारत, द्वीप, और तट। इन क्षेत्रों में से प्रत्येक की कुछ भौगोलिक और कुछ जैविक विशेषताएं हैं।
- जैव विविधता हॉट स्पॉट ऐसे क्षेत्र है जहां भरपूर संख्या में प्रजातियां पाई जाती हैं,उच्च स्थानिकता है और वे लगातार खतरे के दायरे में है। दुनिया के 34 हॉट स्पॉट में से चार भारत में पाए जाते हैं जो पड़ोसी देशों तक विस्तारित हैं।

- भारत विभिन्न कारणों से दुनिया का विशाल विविधता वाला देश है, अर्थात 4 हॉट स्पॉट, 26 मान्यता प्राप्त स्थानिक केंद्र, 2 विशाल क्षेत्र, 3 बायोम और 10 जैव भूगर्भीय क्षेत्र।
- जैव विविधता के मूल्य को आम तौर पर दो मुख्य श्रेणियों में बांटा जा सकता है, अर्थात **आंतरिक या अंतर निहित मूल्य** और **बाहरी या उपयोगिता मूल्य।** आंतरिक मूल्य में एक जीव का महत्व बताया जाता है, जो इसके मूल्य या अन्य किसी वस्तु से स्वतंत्र होता है। उपयोगिता मूल्य का अर्थ है इसके उपयोग या कार्य से तय होने वाला इसका मूल्य।
- ये उपयोग मूल्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकते हैं। प्रत्यक्ष उपयोग मूल्य वे हैं, जिनके लिए वस्तु को सीधे उपभोग किया जाता है, जैसे भोजन या इमारती लकड़ी और अप्रत्यक्ष उपयोग मूल्य वे सेवाएं हैं जो उन मदों की खपत को समर्थन प्रदान करती है जिसमें पारितंत्र के कार्य जैसे पोषण तत्त्वों का चक्र शामिल है।
- गैर उपयोग या निष्क्रिय मूल्य वे इकाइयां हैं जिन्हें हम इस्तेमाल नहीं करते किंतु यदि ये अनुपस्थित हो तो इन्हें खोया हुआ मानते हैं। इनमें **अस्तित्व मूल्य, परंपरागत मूल्य और विकल्प मूल्य** शामिल हैं।

## 6.9 अंत में कुछ प्रश्न

1. जैव विविधता को परिभाषित कीजिए। जैव विविधता के विभिन्न स्तरों का वर्णन कीजिए।
2. भारत के विभिन्न जैव भौगौलिक क्षेत्रों में पाये जाने वाले वन्य जीवन प्रजातियों की सूची बनाइए और उनका विश्लेषण कीजिए।
3. वैश्विक जैव विविधता हॉट स्पॉट को अभिज्ञात करने के मानदण्डो पर चर्चा किजिए।
4. जैव विविधता के उपयोग मूल्यों का विवरण दीजिए।

## 6.10 उत्तर

### बोध प्रश्न

#### बोध प्रश्न 1

स्थलीय, समुद्री और अन्य जैविक पारितंत्रों सहित सभी स्रोतों में रहने वाले जीवित जीवों की विविधता और पारिस्थितिक संकुल, जिसका वे हिस्सा हैं, इसमें प्रजातियों के अंदर, प्रजातियों तथा पारिस्थितिक तंत्रों के बीच विविधता शामिल है।

#### बोध प्रश्न 2

आनुवंशिक विविधता ''विविधता की मूलभूत मुद्रा'' है जो भिन्नता के लिए जिम्मेदार है। आनुवंशिक सूचना की बुनियादी इकाई की यह विविधता हैं जो प्रजाति के अंदर पीढ़ी दर पीढ़ी आगे जाती है (एक ही प्रजाति की विभिन्न किस्में)। प्रजाति में विविधता का अर्थ है प्रजातियों के बीच अंतर (घरेलू और वन्य दोनों)।

### बोध प्रश्न 3

i) 34 वैश्विक जैव विविधता वाले हॉट स्पॉट की सूची में से 4 हॉट स्पॉट को मेयर्स द्वारा भारत और उसके पड़ोसी देशों में रखा गया है।

ii) भारतीय जैव विविधता की स्थानिकता बहुत उच्च है। देश के लगभग 33 प्रतिशत वनस्पति देश के लिए स्थानिक हैं। 49,219 पादप प्रजातियों में हैं, 5150 स्थानिक है और 47 फैमिली के तहत 141 जेनेरा में बांटी गई है, जो विश्व के अभिलेखित वनस्पति जगत का लगभग 30 प्रतिशत हैं।

iii) भारत में 26 मान्यता प्राप्त स्थानिक केंद्र हैं, जो पहचान करने योग्य और अब तक वर्णित पुष्प वाले सभी पादपों में से लगभग एक तिहाई का घर है।

iv) भारत में दो प्रमुख क्षेत्र है, जिन्हें पेलिआर्कटिक और इंडो–मलायन कहते हैं तथा तीन बायोम है अर्थात उष्ण कटिबंधी आर्द्र जंगल, उष्ण कटिबंधी पर्णपाती जंगल और गर्म रेगिस्तान/अर्ध रेगिस्तान।

v) भारत में 10 भूगर्भीय क्षेत्र हैं।

vi) भारत कृष्ट पौधों के उद्भव के 12 केंद्रों में से एक है।

### बोध प्रश्न 4

उपभाग 6.7.1 और 6.7.2 के अंतर्गत देखिए।

## अंत में कुछ प्रश्न

1. भाग 6.2 और 6.3 के अंतर्गत देखिए।
2. भाग 6.4 के अंतर्गत देखिए।
3. भाग 6.5 के अंतर्गत देखिए।
4. भाग 6.7 के अंतर्गत देखिए।

# 6.11 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री

1. WCMC (1992) Global Biodiversity. Status of the earth's Living Resources. Chapman & Hall.
2. National Biodiversity Action Plan and Strategy of India, (Draft of 2002).
3. IUCN (1999) *Resource Material on Biodiversity for General Certificate of Education*.
4. Glowka, L. et. al., (1994) A Guide to the Convention on Biological Diversity. IUCN Gland and Cambridge.

**Internet Sites**

**http://www.unep.ch/conventions/geclist.htm**

**http://www.epw.org.in**

**http://www.cites.org/eng/disc/what.shtml**

इकाई 7

# ऊर्जा संसाधन

## इकाई की रूपरेखा


7.1 प्रस्तावना
संभावित अध्ययन परिणाम
7.2 संसाधन के रूप में ऊर्जा
गैर–पारंपरिक स्रोत
पारंपरिक स्रोत
7.3 पृथ्वी के ऊर्जा आधार की धारण क्षमता
7.4 जनसंख्या वृद्धि और औद्योगिकीकरण के कारण ऊर्जा मांग
ऊर्जा मांग की तुलना में जनसंख्या वृद्धि
औद्योगिकीकरण में ऊर्जा मांग
एशियाई विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में ऊर्जा मांग
7.5 भावी ऊर्जा आवश्यकताएं और संरक्षण
संरक्षण और ऊर्जा
अ–प्रदूषणकारी ऊर्जा तंत्रों का विकास
7.6 सारांश
7.7 अंत में कुछ प्रश्न
7.8 उत्तर
7.9 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री


## 7.1 प्रस्तावना

आधुनिक औद्योगिक समाजों की पहचान ऊर्जा के व्यापक उपयोग से होती है। क्या आप अपने जीवन में बिजली अथवा ऊर्जा के अन्य स्रोतों जैसे पकाने अथवा परिवहन के लिए ईधन के बगैर एक दिन की भी कल्पना कर सकते हैं? सोचिए कि आप जितनी भी चीजों का उपयोग करते हैं वे सब ऊर्जा से चलती हैं। ऊर्जा की आवश्यकता उनके उत्पादन और उन्हें आप तक पहुंचाने के लिए होती है। आप इस बात से सहमत होंगे कि ऊर्जा विकास के वर्तमान मॉडल में एक महत्वपूर्ण कारक है। ऊर्जा के उपयोग और आर्थिक वृद्धि के बीच एक नजदीकी संबंध है, जिसका मापन किसी भी देश में GDP (सकल घरेलू उत्पादन) की वृद्धि के संदर्भ में किया जाता है। अब ये तर्क दिया जाता है कि ऊर्जा की लागत और उपलब्धता किसी समाज अथवा देश की आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा देने में दो प्रमुख कारक होते हैं।

यद्यपि जैसे–जैसे ऊर्जा प्रेरित औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं का विस्तार हुआ है, पर्यावरण पर उनका प्रतिकूल प्रभाव बढ़ा है। इस आयाम पर पिछले कुछ दशकों से अधिक पैनी निगाह रखी जा रही है और आर्थिक विकास में ऊर्जा की भूमिका हमें पर्यावरण–हितैषी ऊर्जा उपयोग के मॉडल विकसित करने में सहायक होगी। इसलिए, हम एक संसाधन के रूप में ऊर्जा की अपनी चर्चा का आरंभ आर्थिक विकास में ऊर्जा की बहुफलकी भूमिका को समझने के साथ करेंगे। हम अपने ऊर्जा संसाधन आधार और हमारे लिए उपलब्ध विभिन्न ऊर्जा विकल्पों की पड़ताल करेंगे। अंत में, हम अपनी ऊर्जा मांग के संदर्भ में पृथ्वी की धारण क्षमता का विश्लेषण नवीकरणीय (renewable) ऊर्जा स्रोतों को अपनाने की दृष्टि से करेंगे।

## संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- ❖ आर्थिक वृद्धि में एक संसाधन के रूप में ऊर्जा की भूमिका पर चर्चा कर सकेंगे;
- ❖ बढ़ती जनसंख्या और औद्योगिकीकरण के कारण ऊर्जा की मांग का विश्लेषण कर सकेंगे,
- ❖ पृथ्वी के ऊर्जा संसाधन आधार का वर्णन कर सकेंगे, और
- ❖ नवीकरणीय स्रोतों की ओर परिवर्तन के साथ ऊर्जा के प्रबंधन को समझा सकेंगे।

## 7.2 संसाधन के रूप में ऊर्जा

ऊर्जा की मांग प्रति 14 वर्ष में दोगुनी हो जाती है और इसे किसी देश के विकास के एक सूचक के रूप में लिया जाता है। भारत, विश्व की 16 प्रतिशत जनसंख्या के साथ विश्व के कुल ऊर्जा उत्पादन के लगभग 3 प्रतिशत का उपभोग करता है; जबकि इसकी तुलना में अमेरिका में विश्व जनसंख्या का 6.25 प्रतिशत भाग है और वह कुल ऊर्जा उत्पादन के 30 प्रतिशत का उपयोग करता है। ऊर्जा उपयोग में निरंतर वृद्धि के बाद भी, भारत में प्रति व्यक्ति उपभोग अब भी अन्य देशों के तुलना में काफी कम है। आज भी, हमारी लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या ईंधन की लकड़ी, गोबर और कृषि अपशिष्टों पर निर्भर करती है। हम जानते हैं कि ऊर्जा के गैर–नवीकरणीय स्रोत जैसे जीवाश्म ईंधन, कोयला और पेट्रोलियम, लंबे समय तक चलने वाले नहीं है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई के कारण वन भी तेजी से कम हो रहे हैं। इसलिए, यह आवश्यक हो गया है कि हम ऊर्जा के वैकल्पिक, गैर–पारंपरिक स्रोतों के विषय में विचार करें। हमे इनमें से कुछ ऊर्जा स्रोतों और उनसे संबंधित पहलुओं पर विचार करना चाहिए।

भारत में ऊर्जा की आवश्यकताएं ऊर्जा स्रोतों की दो श्रेणियों से पूरी की जाती है जैसा कि नीचे दिखाया गया है।

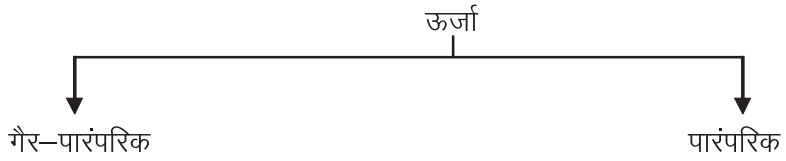


- जीवमात्रा ऊर्जा
- सौर ऊर्जा
- फ्यूल सेल ऊर्जा
- भूतापीय ऊर्जा
- सह–उत्पादन ऊर्जा
- पवन ऊर्जा

- प्राकृतिक तेल ऊर्जा
- गैस ऊर्जा
- कोयला ऊर्जा
- जलविद्युत/हाइड्रोपावर ऊर्जा
- परमाणु ऊर्जा

### 7.2.1 गैर-पारंपरिक स्रोत

ऊर्जा के विभिन्न गैर-परंपरागत स्रोत हैं जिनके विषय में हम यहाँ बताएगे।

**बायोमास (जीवमात्रा) ऊर्जा** : एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है जो पादप संसाधनों, जंतु अपशिष्टों और विभिन्न मानव क्रियाकलापों के अपशिष्टों से व्युत्पन्न है। इसे इमारती लकड़ी के सहउत्पादों, कृषि फसल, वनों से मिलने वाली अपरिकृष्त सामग्रियों, घरेलू अपशिष्टों और काष्ठ से प्राप्त किया जाता है। बायोमास (Biomass) ऊर्जा का एक प्रमुख स्रोत है और विश्वभर में कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस के बाद सबसे महत्वपूर्ण ईंधन है।

बायोमास से वायुमंडल में कार्बन-डाईऑक्साइड का उत्सर्जन नहीं होता है क्योंकि यह उतनी ही मात्रा में कार्बन को वृद्धि के काल में अवशोषित कर लेता है। इसका ये लाभ है कि इसका उपयोग उन्हीं उपकरणों अथवा बिजली संयंत्रों से बिजली उत्पादन के लिए किया जा सकता है जिनमें जीवाश्म ईधनों को जलाया जाता है।

भारत देश में बायोमास ईधन उपयोग लिए जाने वाले कुल ईधन का लगभग एक तिहाई भाग होते है। 90 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण परिवार और लगभग 15 प्रतिशत शहरी परिवार बायोमास ईंधनों (जैसे लकड़ी, गोबर के उपले, फसल अपशिष्ट, बुरादे आदि) का उपयोग करते हैं। पारंपरिक चूल्हों में ऐसे ईधनों के अपर्याप्त दहन से घरों के अंदर वायु प्रदूषण और उससे होने वाले स्वास्थ्य संकटों की गंभीर समस्या पैदा हो गई है। यहीं नहीं, जलाने की लकड़ी के उपभोग के अधारणीय (unsustainable) स्तर के कारण वनोरोपण (deforestation) और मरूस्थलीकरण (desertification) हो रहा है; जो पर्यावरण को निम्नीकृत कर रहा है। अतः एक संसाधन के रूप में बायोमास का उचित प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है।

इस संदर्भ में बायोमास के उपयोग द्वारा पर्याप्त और वहन करने योग्य स्वच्छ ऊर्जा प्रणालियों और सेवाओं के लिए तकनीकी समाधान, संस्थागत, व्यवस्थाएं, वित्तीय सहायता और प्रशिक्षण योजनाएं अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। इस दिशा में गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय (Ministry of Non-conventional Energy Sources; MNES) द्वारा एक पहल की गई है। यह अधिक ऊर्जा के निष्कर्षण, जलाने की लकड़ी के घरेलू उपभोग को कम करने, रोजगार सृजन और ग्रामीण जनता के जीवन स्तर को बेहतर बनाने के उद्देश्य से बायोमास ईंधनों के प्रभावी उपयोग के लिए देशी रूप से विकसित की गई प्रोद्यौगिकियों को बढ़ावा दे रहा है।

**बायोमास गैसीफायर** ऊर्जा उत्पादन के लिए उपयोग की जाने वाली एक अन्य प्रोद्यौगिकी है (चित्र 7.1)। एक बायोमास गैसीफायर काष्ठीय और चूर्णिल दोनों प्रकार के ठोस बायोमास जैसे कि लकड़ी, कृषि और कृषि–उद्योग अपशिष्टों आदि को ताप रासायनिक गैसीकरण प्रक्रिया के द्वारा उत्पादक गैस में परिवर्तित

कर देता है। गैसीफायर ठोस ईंधन को अधिक सुविधाजनक तरीके से उपयोग किए जा सकने वाले गैसीय रूप में परिवर्तित कर देता है।

**चित्र 7.1: बायोमास गैसीफायर।**

बायोमास को ब्रिकेट्स (ईधन के रूप में उपयोग किए जाने वाले विभिन्न आकारों के कठोर खंड) में संपीडित करके उसकी उपयोगिता और में सुविधा को बढ़ाना अधिक व्यवहारिक रहता है। संपीडित ब्रिकेटित रूप में, बायोमास का उपयोग पारंपरिक चूल्हों और भट्टियों में अथवा गैसीफायर में कोयले के स्थान पर प्रत्यक्ष रूप से ईंधन के रूप में किया जा सकता है।

## सौर ऊर्जा

सौर ऊर्जा सबसे आसानी से उपलब्ध ऊर्जा का स्रोत है। यह मुफ्त में मिलती हैं क्योंकि यह किसी की संपत्ति नहीं है। ये भी प्रदूषणकारी नहीं होती है (चित्र 7. 2)।

आज हम जो ऊर्जा जीवाश्म ईंधनों से प्राप्त कर रहे हैं, वह भी वास्तव में सौर ऊर्जा ही है। जिसे लाखों वर्ष पूर्व पादपों द्वारा बद्ध/पाशित कर लिया गया था। पादप अपना भोजन और वृद्धि के लिए प्रकाश संश्लेषण सौर ऊर्जा के उपयोग द्वारा ही करते हैं। लाखों वर्ष पूर्व, विशाल वन क्षेत्र भूपटल के भीतर दब गए थे और वे सभी अत्यधिक दाब और तापमान के तहत् कोयले और तेल में रूपांतरित हो गए। इसीलिए कोयले और तेल को जीवाश्म ईंधन कहते हैं।

लगभग 60 मिलियन $km^2$ उष्ण कटिबंधीय सागर सौर विकिरण को अवशोषित करती है जो कि ऊष्मा के 245 बिलियन बैरल, तेल के बराबर होता है।

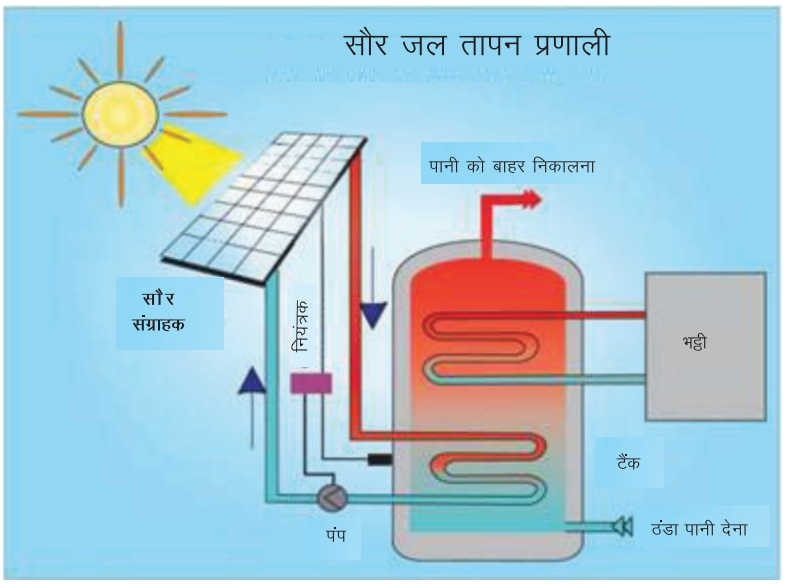


**चित्र 7.2 : पानी को गर्म करने के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग।**

**चित्र 7.3 : सौर ऊर्जा चालित फ्रिज।**

आजकल हमने विभिन्न कार्यों के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग करना सीख लिया है। सौर ऊर्जा का उपयोग सर्दियों में गर्म पानी देने अथवा फ्रिज चलाने के लिए प्रत्यक्ष रूप से किया जा सकता है (चित्र 7.3)। इसका उपयोग ठंडे क्षेत्रों में कमरे के तापन के लिए भी किया जा सकता है (चित्र 7.4)। सौर कुकर का उपयोग अनेक घरों में खाना पकाने के लिए किया जाता है (चित्र 7.5। सौर ऊर्जा का उपयोग 'फोटोवोल्टाइक सैल' की सहायता से वाहनों को चलाने और प्रकाश के लिए भी किया जाता है। चूंकि यह ऊर्जा का एक अक्षय स्रोत है, सौर ऊर्जा की प्राप्ति के लिए सस्ती और प्रभावी फोटोसेल या फोटोवोल्टाइक युक्तियों को विकसित करना काफी लाभकारी होगा।

सौर ऊर्जा चालित फ्रिज को ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विकसित किया गया है। ये सब्जियों, फलों को अधिक समय तक ताजा रखते हैं।

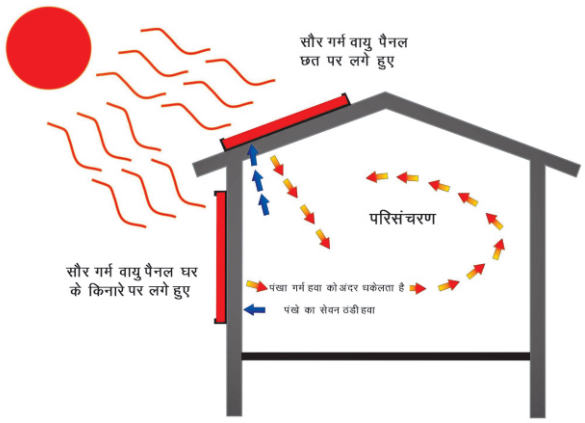


**चित्र 7.4 : सौर ऊर्जा से तापित कक्ष**

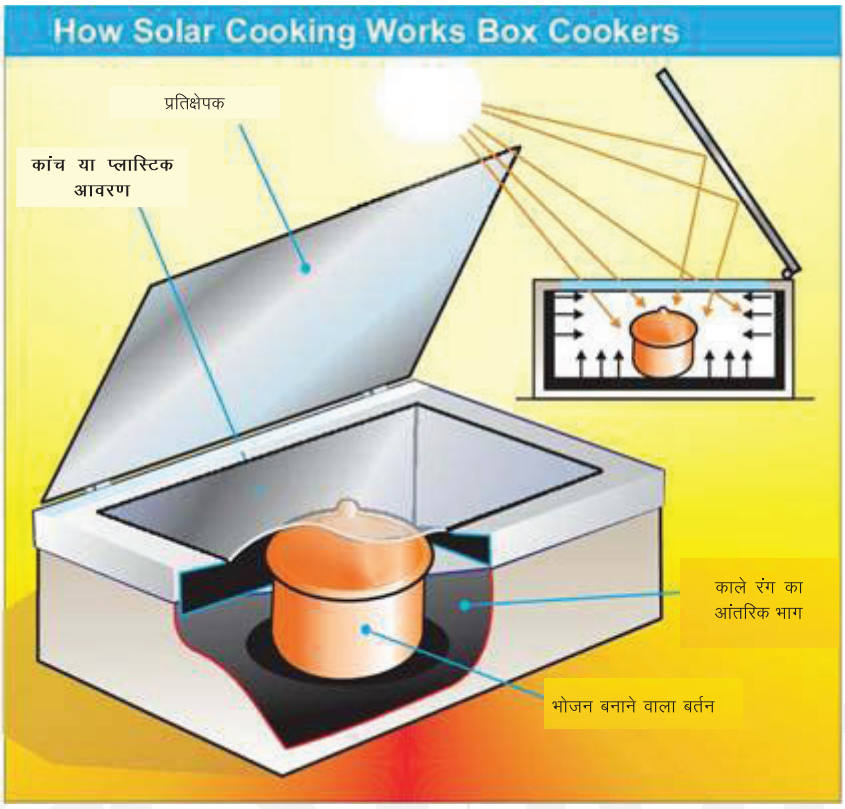


चित्र 7.5 : सोलर कुकर

सोलर फोटोवोल्टाइक (SPV) पैनलों में सौर विकिरण सीधे बिजली में परिवर्तित हो जाते हैं, जिन्हें इमारतों अथवा खुले स्थानों पर लगाया जाता है। इस बिजली का उपयोग उसी रूप में अथवा बैटरी में भंडारित करके घरों में प्रकाश व्यवस्था, सड़कों की प्रकाश व्यवस्था, ग्रामीण विद्युतीकरण, पानी पंप करने, लवणीय जल के विलवणीकरण, सुदूर दूरसंचार, रिपीटर स्टेशनों, और रेलवे सिग्नलों की विद्युत आपूर्ति के लिए उपयोग किया जा सकता है। सौर निष्क्रिय इमारतों में सौर ऊर्जा का उपयोग इमारतों की डिजाइन में किया जाता है जिससे तापन और शीतन के लिए ऊर्जा उपभोग को कम किया जा सके। यह प्रोद्यौगिकी शहरी वास्तुकला में तेजी से स्वीकार्य हो रही है।

## ईंधन सेल(फ्यूल)

ईंधन सेल ऐसी विद्युत रासायनिक युक्तियां हैं जो ईंधन की रासायनिक ऊर्जा को बहुत प्रभावी रूप से बिजली और ताप में परिवर्तित कर देती है, जिससे ईंधन के दहन से बचाव हो जाता है (चित्र 7.6)। ईंधन सेल में दो इलैक्ट्रोडों के बीच में एक इलैक्ट्रोलाइट (विद्युत अपघट्य) होता है। ऐसी सेल के लिए सबसे उपयुक्त ईंधन हाइड्रोजन अथवा हाइड्रोजन युक्त यौगिकों का मिश्रण होता है।

एक इलैक्ट्रोड से हाइड्रोजन और दूसरे से ऑक्सीजन प्रवाहित की जाती है, और ये विद्युत रासायनिक रूप से अभिक्रिया करके विद्युत, जल और ताप का उत्पादन करती है।

ईंधन सेलों का उपयोग अंतरिक्ष यानों में किया जा रहा है और इनका उपयोग शहरी वायु प्रदूषण को अत्यधिक कम करने के लिए विद्युत चालित वाहनों में भी किया जा सकता है। ईंधन सेल चालित वाहनों की ऊर्जा रूपांतरण क्षमता बहुत अधिक होती है। (वर्तमान मे उपयोग किए जाने वाले इंजनो से लगभग दोगुनी) उत्सर्जन काफी कम होते हैं (सिर्फ $CO_2$ और जलवाष्प का ही उत्सर्जन होता है)। ईंधन –सेल चालित विद्युत वाहन

बैटरी चालित वाहनों से अधिक क्षमता वाले और आसान एवं त्वरित पुर्नईंधन भरण (refueling) के संदर्भ में बेहतर होते हैं। ईंधन सेल प्रणाली लघु स्तर पर विकेन्द्रीकृत बिजली उत्पादन के लिए उत्कृष्ट हैं।

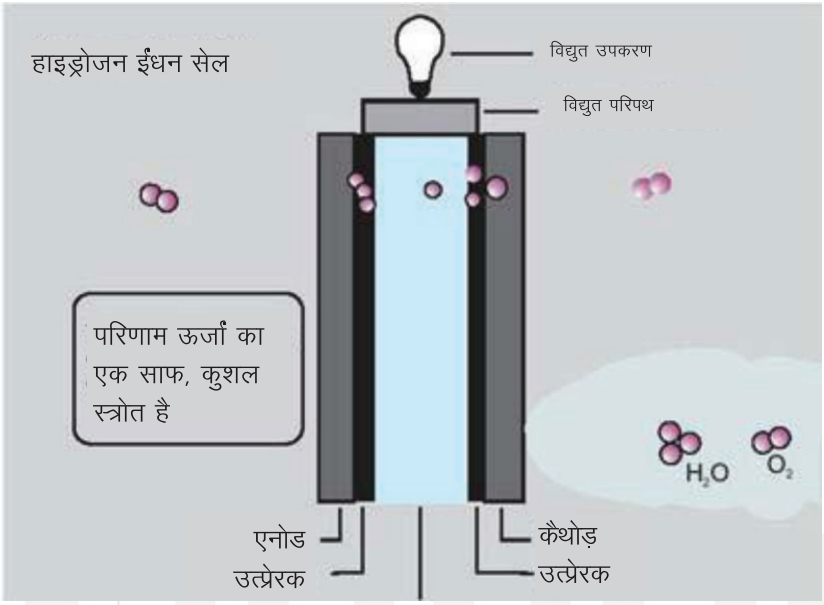


**चित्र 7.6 : ईंधन सेल (फ्यूल)।**

ईंधन सेल सुदूर क्षेत्रों में व्यावसायिक इमारतों; अस्तपालों और हवाई अड्डो को ताप और बिजली दोनों की आपूर्ति कर सकते हैं।

## तरंग और ज्वारीय ऊर्जा

**तरंगों** (waves) और **ज्वार** (tide) से भी ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है ये तरंगें और ज्वार ऊर्जा के अन्य स्रोत हैं जो सतत् हैं और जिनका बिजली उत्पादन के लिए दोहन किया जा सकता है (चित्र 7.7) विशेषरूप से ऐसे क्षेत्रों में जहाँ सागर का जल संकरे पथों से गुजरता हो, जो प्राकृतिक रूप से नदी के सागर में मिलने के स्थान द्वारा प्रदान किया जाता है।

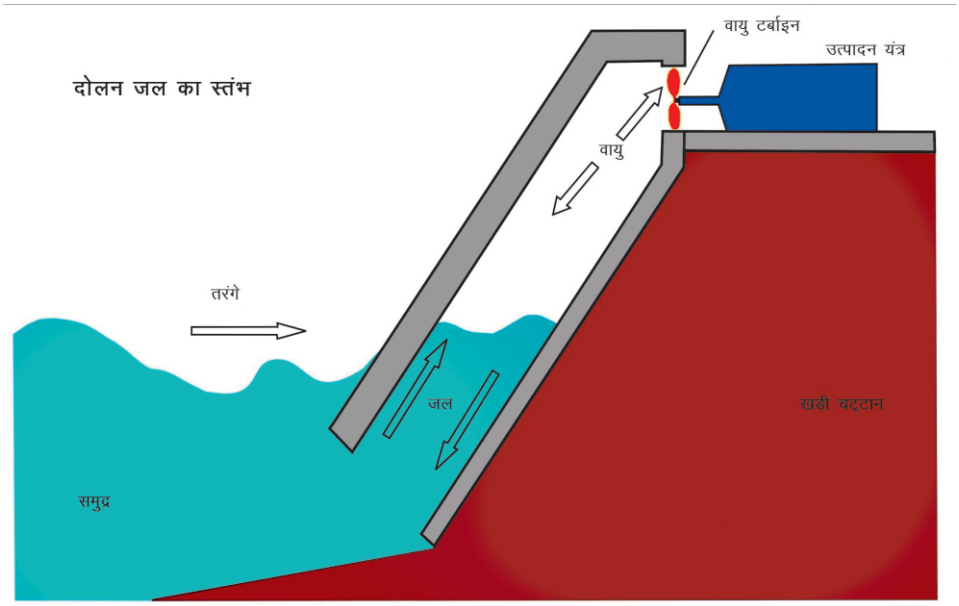


**चित्र 7.7 : ज्वारीय बिजली घर।**

अंदर आने वाले बाहर और जाने वाले ज्वार दोनों को ही बांध द्वारा बद्ध रखा जाता है। जल स्तरों में अन्तर दोनों दिशाओं में बिजली का उत्पादन करता है क्योंकि जल उत्क्रमणीय टर्बोजेनरेटरों से होकर बहता है।

जल द्वारा लायी हुई ऊर्जा को व्यापक रूप से पहाड़ी क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है, जहां एक पैडल वाला चक्का तेज प्रवाह की धारा में रखे जाने पर घूमता है। इस सिद्धान्त पर बनी छोटे साइज की आटा चक्कियां कश्मीर में लंबे समय तक प्रयोग में लाई जाती थी। वास्तव में, बड़े 'जलविद्युत' बिजलीघर इसी सिद्धान्त पर काम करते हैं। आधुनिक प्रकार के पैडल पहिए को घुमाने के लिए जिसे टरबाइन कहते हैं, प्राकृतिक अथवा कृत्रिम जलप्रपात का उपयोग किया जाता है। यह घूमने पर ऊर्जा का उत्पादन करता है।

भारत में, 150 MW क्षमता की पहली तरंग ऊर्जा परियोजना त्रिवेन्द्रम के निकट विजिंजम में स्थापित की गई है। 5000 करोड़ रूपये की लागत की एक बड़ी ज्वार तरंग बिजली परियोजना गुजरात की कच्छ की खाड़ी की में हनथल खाड़ी में प्रस्तावित है।

## भूतापीय ऊर्जा

ज्वालामुखी, तप्त स्रोतों और गर्म पानी के स्रोत (गीजर) और सागरों तथा महासागरों में जल के अंदर पाई जाने वाली मीथेन **भूतापीय ऊर्जा** के स्रोत हैं (भूतापीय का अर्थ है पृथ्वी से प्राप्त ताप)। कुछ देशों जैसे अमेरिका में जल को भूमिगत, तप्त जल भंडारों से पंप किया जाता है और घरों को गर्म करने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

तप्त स्रोतों के गर्म जल और अतितप्त वाष्प का उपयोग बिजली उत्पादन के लिए किया जा सकता है (चित्र 7.8)। अपने देश में 46 जलतापीय क्षेत्र हैं जहाँ स्रोतों के जल का तापमान $150^0C$ से अधिक होता है। तप्त स्रोतों की ताप ऊर्जा का उपयोग बिजली उत्पादन, इमारतों और घरों के तापन तथा ठंडे क्षेत्रों में सब्जियाँ उगाने के लिए ग्रीनहाउसों के तापन के लिए किया जा सकता है।

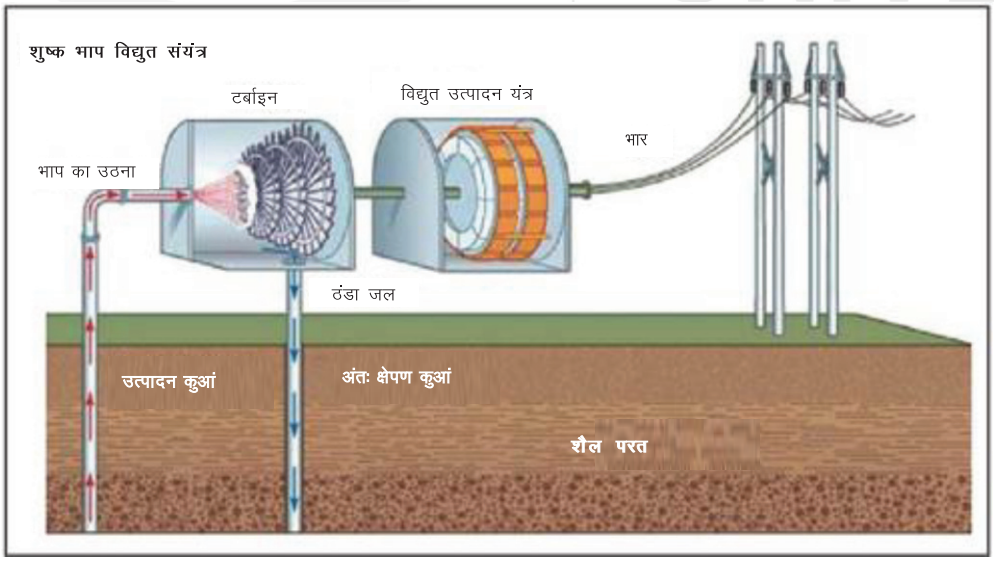


**चित्र 7.8 : गीजर एक भूतापीय बिजली प्रचालन है और सीधे वाष्प से ऊर्जा का उत्पादन करता है।**

भारत में, उत्तरपश्चिमी हिमालय और पश्चिमी तट को भूतापीय क्षेत्र माना जाता है। उपग्रहों जैसे IRS-1 ने भूतापीय क्षेत्रों का पता लगाने में भूमि के इन्फ्रारेड फोटोग्राफ (अवरक्त चित्र) लेकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण पहले ही 350 से अधिक ऐसे तप्त स्रोतों/स्थलों की पहचान कर चुका है जिनका भूतापीय ऊर्जा के दोहन के क्षेत्रों के रूप में पता लगाया जा सकता है। लद्दाख क्षेत्र की पूगा घाटी में एक परीक्षणात्मक 1 KW उत्पादन क्षमता की परियोजना का उपयोग कुक्कुट पालन, मशरूम की खेती और पशमीना ऊन के प्रसंस्करण के लिए किया जा रहा है। इन सभी के लिए उच्चतर तापमानों की आवश्यकता होती है।

**सह–उत्पादन** (Co-generation) ईंधन से दो प्रकार की ऊर्जा उत्पादित करने की संकल्पना है, एक ताप से और दूसरी विद्युत अथवा यांत्रिक ऊर्जा से। एक पारंपरिक ताप बिजली संयंत्र में, ईंधन को जलाने से उच्च–दाब की वा प का उत्पादन होता है, इसका उपयोग टरबाइन को चलाने के लिए किया जाता है, जो फिर एक आल्टरनेटर को चलाकर बिजली का उत्पादन करता है। एक्जॉस्ट (निर्गम) वा प को सामान्यतः जल में संघनित कर लिया जाता है जो बॉयलर में वापस चला जाता है। (चित्र 7.9)

पारंपरिक बिजली संयंत्रों की क्षमता लगभग 35% होती है क्योंकि बड़ी मात्रा में ताप संघनन की प्रक्रिया में लुप्त हो जाता है। एक सह–उत्पादन संयंत्र में, कम दाब की एकजॉस्ट वाष्प, जो टरबाइन से बाहर निकलती है, वह संघनित नहीं होती है बल्कि इसका उपयोग कारखानों और घरों में तापन के लिए किया जाता है। अतः 75–90% तक के बहुत उच्चक्षमता स्तर प्राप्त किए जा सकते हैं। भारत में सह–उत्पादन द्वारा बिजली उत्पादन की क्षमता संरक्षी आकलनों के अनुसार भी 2000 MW से अधिक है।

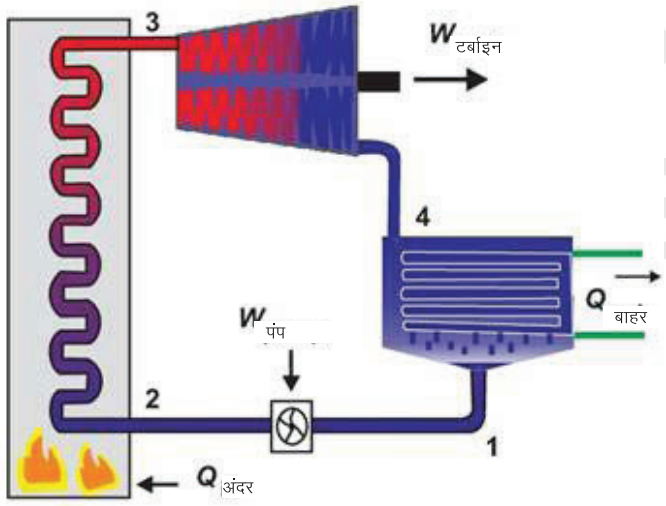


**चित्र 7.9 : बैगास (खोई) आधारित सह–उत्पादन।**

## पवन ऊर्जा

पवन ऊर्जा (wind energy) का उपयोग सैंकड़ों वर्षों से नौकायन, अनाजों की पिसाई, और सिंचाई के लिए किया जा रहा है। पवन ऊर्जा तंत्र वायु की गति से संबद्ध गतिक ऊर्जा (kinetic energy) को अधिक उपयोगी बिजली में परिवर्तित कर देते हैं। वायु टरबाइन पवन की ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में रूपांतरित कर देती है, जिसे फिर सीधे पिसाई आदि के लिए अथवा बिजली उत्पादन के लिए उपयोग किया जा सकता है। पवन चक्कियां एकल रूप से अथवा समूहों में प्रयोग की जाती है, जिन्हें 'पवन ऊर्जा फार्म' (wind farms) कहते हैं। पवन चक्कियां अनेक देशों में लंबे समय से प्रयोग में लाई जा रही हैं लेकिन भारत में ये हाल ही में चलन में आई हैं। (चित्र 7.10)।

चित्र 7.10 : पवन पंप के रूप में नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग।

## बायोगैस

आपने बायोगैस के उत्पादन के लिए गोबर का उपयोग के विषय में संभवतः सुना होगा जो खाना पकाने के लिए ऊर्जा का एक स्रोत है (चित्र 7.11)। एक सरल प्रक्रिया के द्वारा गोबर का उपयोग गैस के उत्पादन के लिए किया जाता है जिसमें लगभग 55 से 70 प्रतिशत ज्वलनशील मीथेन गैस होती है और ये ग्रामीण क्षेत्रों में उपयोग के लिए एक स्वच्छ और प्रभावी ईंधन है। जलीय खरपतवार जैसे जलकुंभी, *साल्वीनिया, हाइड्रिला,* कसपत और शैवाल गोबर के पूरक के रूप में उपयोगी पाए गए हैं। बायोगैस का उपयोग वाष्प उत्पादन के लिए भी किया जा सकता है जिसका उपयोग फिर इंजनों या कारखानों में मशीनों को चलाने अथवा बिजली उत्पादन के लिए टरबाइनों को चलाने के लिए किया जा सकता है। ये पाया गया है कि बड़े बायोगैस संयंत्र अनेक परिवारों अथवा एक छोटे गाँव की भी ऊर्जा मांगों को पूरा कर सकते हैं। बायोगैस उत्पादन के बाद बचा हुआ गोबर अथवा स्लरी का उपयोग खेतों में खाद के रूप में किया जा सकता है। यह कार्बनिक अपशिष्ट से ऊर्जा प्राप्ति का एक सस्ता तरीका है। चीन और भारत में, ग्रामीण क्षेत्रों में हजारों बायोगैस संयंत्रों को स्थापित करने के लिए बहुत अधिक प्रयास किए जा रहे हैं।

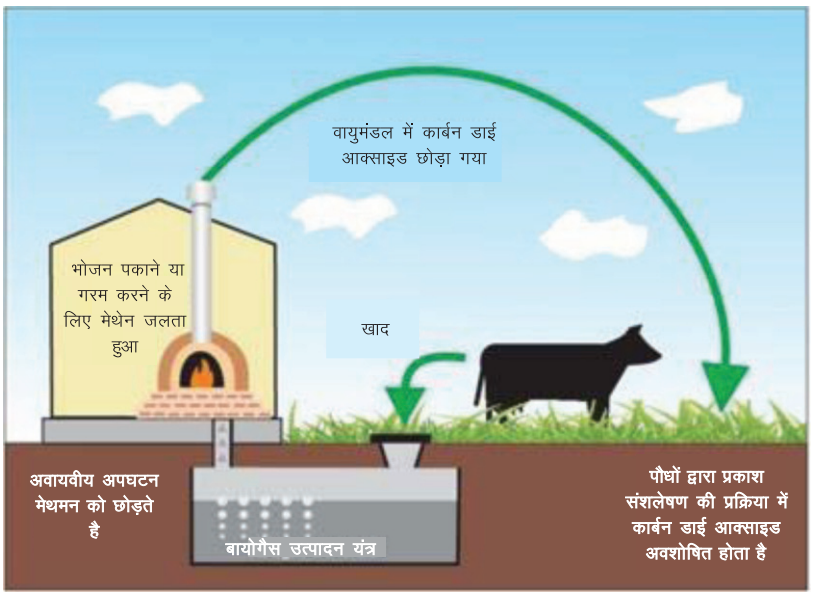


चित्र 7.11: बायोगैस प्लान

भारत में अत्यधिक क्षमता के रूप में ऊर्जा एक गैर–परंपरागत स्रोत है। हमारे विविध भौगोलिक स्थिति ऊर्जा के गैर–परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों जैसे सौर, वायु और ज्वारीय ऊर्जा आगे को बढ़ने में सहायता करते हैं। सौर ऊर्जा को भविष्य क्षमता के रूप में देख रहे हैं। जिसकी वजह से अंतर्राष्ट्रीय सौर संधि की स्थापना वर्ष 2015 में हुई। इस संधि की स्थापना के बाद भारत सरकार द्वारा पहल की गई। या विकासशील स्वच्छ हरित ऊर्जा में सहायता करेगा जो परंपरागत ऊर्जा जैसे कोयला, पेट्रोलियम और रेडियो सक्रियता खनिज से समस्याएं उभर रहे हैं इसलिए हम कह सकते हैं ऊपर बताए गये गैर–परंपरागत स्रोत अग्रिम वर्षों के लिए एक ऊर्जा स्रोत है। परंतु, आज के समय में हमारे प्रमुख ऊर्जा स्रोत कोयला, जीवाश्म ईंधन, प्राकृतिक गैस, जलविद्युत शक्ति और परमाणु ऊर्जा। ये ऊर्जा के स्रोत को परंपरागत ऊर्जा स्रोत कहते हैं।

आइये, हम इन ऊर्जा स्रोतों को नीचे के अनुभाग में विस्तृत रूप से वर्णन करते हैं।

## 7.2.2 पारंपरिक स्रोत

पारंपरिक स्रोतों जैसे तेल, गैस, कोयला और हाइडल के द्वारा ऊर्जा उत्पादन कृषि, उद्योग और जनसंख्या में वृद्धि के कारण होने वाली वर्तमान मांग से कहीं कम है। भारत का विद्युत क्षेत्र वर्तमान में उत्पादन क्षमता, वितरण हानियों, कम विश्वसनीयता और अक्सर बिजली गुल हो जाने की समस्याओं को झेल रहा है। भारतीय उद्योगों का कहना है कि विद्युत आपूर्ति उनकी प्रगति की सबसे बड़ी बाधाओं में से एक है। एक सरकारी आकलन के अनुसार यदि हमारी अर्थव्यवस्था को अनुमानित 7-8 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ना है तो ऊर्जा की मांग में अगले 15 वर्षों में 8-10 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि होनी चाहिए। कमी का निहितार्थ है अन्तरराष्ट्रीय बाजारों पर अधिक निर्भरता का होना है।

### तेल (जीवाश्म ईंधन)

तेल भारत की ऊर्जा का लगभग 30 प्रतिशत भाग है। देश में 1999 में प्रतिदिन औसतन 19.3 लाख बैरल तेल का उपभोग किया जाता था और इसके आने वाले वर्षों में 30.1 लाख बैरल प्रतिदिन हो जाने की उम्मीद की जाती है।

भारत अपना अधिकांश तेल बॉम्बे हाई फील्ड ऊपरी आसाम, कैम्बे, कृष्णा–गोदावरी बेसिन और कावेरी बेसिन से प्राप्त करता है। आकलनों के अनुसार हमारे तेल भंडार 4.7 अरब बैरल के हैं। बॉम्बे हाई फील्ड, जोकि भारत का सबसे बड़ा उत्पादक क्षेत्र है, से 1998 में 250,000 बैरल/दिन और 1999 में 210,000 बैरल प्रतिदिन तेल का उत्पादन हुआ था।

पेट्रोलियम उत्पादों का उपयोग 1991–1992 में 5.7 करोड़ टन से बढ़कर 2000 में 10.7 करोड़ टन तक हो गया। इंडिया हाइड्रोकार्बन विजन 2025 की रिपोर्ट का आकलन है कि 2025 तक भावी रिफाइनरी मांग 36.8 करोड़ टन की हो जाएगी। अतः भारत पेट्रोलियम उत्पादों के लिए एक प्रमुख वै वक बाजार बन रहा है।

**प्राकृतिक गैस** : भारत की ऊर्जा मांगों का लगभग 7 प्रतिशत विशेषरूप से बिजली उत्पादन; उर्वरक और पेट्रोरसायन उत्पादन में **प्राकृतिक गैस** (natural gas) से पूरा होता है। प्राकृतिक गैस से विदेशी तेल पर निर्भरता कम हो सकती है। प्राक तिक गैस के उपयोग के प्रमुख पर्यावरणीय लाभ सल्फर डाईऑक्साइड की अनुपस्थिति और कार्बन डाईऑक्साइड तथा नाइट्रोजन डाईऑक्साइड के स्तरों में कमी है। वर्तमान में, भारत का प्राकृतिक गैस उपयोग पूरी तरह से घरेलू उत्पादन से पूरा हो रहा है।

## कोयला (जीवाश्म ईंधन)

भारत अपनी कुल ऊर्जा मांग के आधे से अधिक के लिए **कोयले** पर निर्भर करता है। देश की लगभग तीन चौथाई बिजली और 63 प्रतिशत व्यावसायिक ऊर्जा कोयले से प्राप्त होती है। भारत में विशाल कोयला भंडार हैं जो विश्व के कुल भंडारों का 8 प्रतिशत भाग हैं। यह चीन और अमेरिका के बाद विश्व में तीसरा प्रमुख कोयला उत्पादक है। इसकी अधिकांश कोयले की मांग घरेलू उत्पादन से पूरी होती है, एकमात्र अपवाद खाना पकाने में उपयोग किया जाने वाला कोयला है जिसकी आपूर्ति कम है। भारत में विशाल कोयला भंडारों के बावजूद, सिर्फ लगभग 3 प्रतिशत कोकिंग कोयला है, अतः भारत के स्टील उद्योग को अपनी वा िक मांगों का लगभग 25 प्रतिशत भाग पूरा करने के लिए कोकिंग कोयले का आयात करना पड़ता है।

## हाइड्रोपावर/पनबिजली

हाइड्रोपावर/पनबिजली सबसे सस्ती और स्वच्छ होती हैं, अतः ये ऊर्जा का श्रेष्ठ स्रोत है (चित्र 7.12)। यद्यपि, विशाल बांधों से बिजली उत्पादन से हाल के वर्षो में काफी विवाद हुए हैं और छोटे पनबिजली संयंत्र इसके उपयुक्त विकल्पों के रूप में प्रचलित हो रहे हैं ये संयंत्र सुदूर और ग्रामीण इलाकों में बिजली की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं जहाँ ग्रिड आपूर्ति उपलब्ध नहीं है।

चित्र 7.12 पनबिजली/हाइड्रोपावर।

## परमाणु ऊर्जा

इस कार्य के लिए उपयोग की गई युक्ति को परमाणु रिएक्टर कहते हैं (चित्र 7.13)। परमाणु रिएक्टर ताप उत्पन्न करते हैं जिसका उपयोग वाष्प के उत्पादन के लिए किया जाता है जिससे बिजली उत्पादन के लिए टरबाइनों को घुमाया जाता है। यह आकलन किया गया है कि 1kg प्राकृतिक यूरेनियम से, जिसे 235U के रूप में लिखते हैं 35000kg कोयले द्वारा उत्पादित ऊर्जा के बराबर ऊर्जा का उत्पादन होता है। परमाणु ईंधन जैसे यूरेनियम से यह ऊर्जा उत्पादन अपेक्षाकृत स्वच्छ और प्रभावी है तथा कोयले और पेट्रोलियम का विकल्प बन सकता है। यद्यपि, परमाणु रिएक्टरों को मानव आबादी से दूर स्थित स्थानों पर स्थापित किया जाना चाहिए। इन्हें कड़े सुरक्षा नियंत्रण में प्रचालित करना चाहिए; जिससे रेडियोधर्मी पदार्थ के दुर्घटनावष रिसाव को रोका जा सके। रेडियाधर्मी अपशिष्टों का निस्तारण सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

चित्र 7.13 : एक परमाणु बिजली संयंत्र का दृश्य।

## बोध प्रश्न 1

**सही विकल्प को (✓) कीजिए–**

i) सौर ऊर्जा

a) नवीकरणीय गैर–पारंपरिक ऊर्जा है

b) अ–नवीकरणीय पारंपरिक ऊर्जा है

c) अ–नवीकरणीय ऊर्जा है।

ii) पादप अपने भोजन का निर्माण निम्न का उपयोग करके बनाते हैं

a) जीवाश्म ईंधन

b) सौर ऊर्जा

c) कार्बनिक पोषक ऊर्जा

iii) गैर–पारंपरिक ऊर्जा के स्रोत का उपयोग

a) सस्ता है

b) प्रदूषण मुक्त है

c) सस्ता और प्रदूषण मुक्त दोनों है।

iv) रिएक्टर उत्पादन करता है

a) बायोगैस का

b) भूतापीय ऊर्जा का

c) परमाणु ऊर्जा का

v) जीवाश्म ईधनों जैसे कोयले से जो ऊर्जा हम प्राप्त करते हैं वह वास्तव में

a) भूतापीय ऊर्जा है

b) सौर ऊर्जा है

c) गैर–परंपरागत ऊर्जा है

## 7.3 पृथ्वी के ऊर्जा आधार की धारण क्षमता

पृथ्वी पर मानव स्पीशीज के लिए सतत धारण क्षमता, संसाधन उपलब्धता के साथ–साथ संस्कृति और आर्थिक विकास के स्तर के अनुसार भी परिवर्ती होती है। अतः मानव धारण क्षमता के दो मापन होते हैं :

- जैवभौतिक धारण क्षमता, और
- सामाजिक धारण क्षमता

**जैवभौतिक धारण क्षमता** : वह अधिकतम जनसंख्या है जिसे प्रोद्यौगिकी के दिए गए स्तर पर पृथ्वी के संसाधनों द्वारा समर्थित किया जा सकता है।

**सामाजिक धारण क्षमता** : किसी दी गई सामाजिक रचना में दीर्घकालिक जैवभौतिक धारण क्षमता है।जिसमें उपभोग और व्यापार के पैटर्न सम्मिलित हैं।

अतः सामाजिक धारण क्षमता जैवभौतिक धारण क्षमता से कम होना चाहिए क्योंकि यह जीवन की गुणवत्ता से संबंन्धित है। इसके साथ ही यह हमें सतत तरीके से **वर्तमान जीवन स्तर पर** समर्थन किए जा सकने वाले मनुष्यों की संख्या का आंकड़ा भी देती है।

पृथ्वी द्वारा दीर्घकाल तक वहन की जा सकने वाली जनसंख्या का आकलन करने के लिए जीवनशैली और उपभोग स्तर का चयन अथवा पूर्वानुमान अवश्य किया जाना चाहिए। ऐसे में, सामाजिक मुद्दों की जानकारी महत्वपूर्ण हो जाती है। उदाहरण के लिए, बहुत अधिक विश्व जनसंख्या होने पर भोजन उपभोग का स्तर बहुत कम हो सकता है और संभवतः भुखमरी के कगार पर पहुंच सकता है। इसका परिणाम सामाजिक रूप से अस्थिर समाज होगा। **सामाजिक रूप से दीर्घकालिक धारण क्षमता उपभोग के ऐसे स्तर पर आधारित होनी चाहिए जो मनुष्य की भोजन, जल और स्थान की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ ही सामाजिक–राजनीतिक अधिकारों, स्वास्थ्य, शिक्षा और कल्याण के अवसर भी प्रदान करने में सक्षम हो।**

सामाजिक संपोशणीयता (sustainability) का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू संसाधनों का समान वितरण है। संपदा का असमान वितरण सामाजिक अस्थिरता और विघटन कर सकता है।

### बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों को को ठक में दिए गए उपयुक्त शब्दों से भरिएः

a) किसी पारिस्थितिक तंत्र की धारण क्षमता को उस क्षेत्र द्वारा समर्थित की जाने वाली स्पीशीज की ..... (न्यूनतम/अधिकतम) जनसंख्या के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

b) प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष उपयोग की जाने वाली .....(ताप/ऊर्जा) की मात्रा जीवन स्तर के मापन का उपयोगी तरीका है।

c) उत्तरी अमेरिका का प्रति व्यक्ति ऊर्जा उपयोग यूरोप के दोगुने से ..... (कम/अधिक) है।

d) सामाजिक रूप से ..... (अधारणीय/धारणीय) धारण क्षमता उपभोग के उस स्तर पर आधारित होनी चाहिए, जो मनुष्य की भोजन, पानी और आवास की मूलभूत आव यकताओं को पूरा करने के साथ ही उसे सामाजिक–राजनीतिक अधिकारों, स्वास्थ्य, शिक्षा और कल्याण के अवसर भी प्रदान करे।

## 7.4 जनसंख्या वृद्धि और औद्योगिकीकरण के कारण ऊर्जा मांग

विकासशील देशों की मानव जनसंख्या उसके वर्तमान चार अरब के आंकड़े से 2050 तक आठ अरब से अधिक हो जाने का पूर्वानुमान है, और उस समय वह विश्व जनंसख्या का लगभग नब्बे प्रतिशत भाग होगी। जनसंख्या वृद्धि एक कारक है जोकि विश्वव्यापी रूप से ऊर्जा की विशेषरूप से बिजली की मांग को प्रेरित करती है।

### 7.4.1 ऊर्जा मांग की तुलना में जनसंख्या वृद्धि

दो प्रमुख कारक जो आगामी अर्ध–शताब्दी के काल में विश्वभर में ऊर्जा (विशेष रूप से बिजली) की मांग को अत्यधिक बढ़ा देंगे, वे निम्न हैं:

- जनसंख्या वृद्धि, और
- कम विकसित देशों में प्रतिव्यक्ति आर्थिक वृद्धि

आइए हम इसे और स्पष्ट रूप से समझाते हैं। वर्तमान मे, कम–विकसित देशों में एक औसत व्यक्ति पश्चिमी यूरोप अथवा जापान में एक औसत व्यक्ति द्वारा उपभोग की जाने वाली ऊर्जा के सिर्फ एक बटा छठवें भाग का ही उपभोग करता है (चित्र 7.14 देखिए)

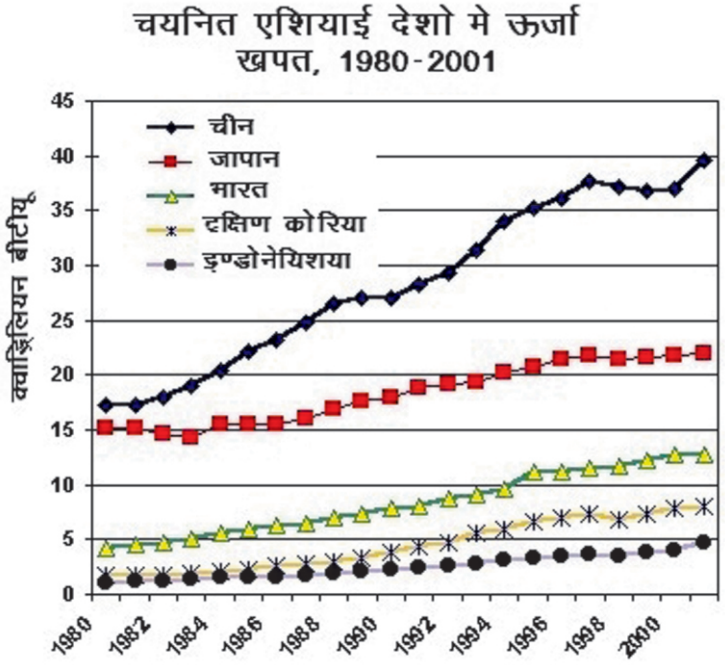


चित्र 7.14 : चयनित एशियाई देशों में ऊर्जा उपभोग 1980–2001।

अगले 50 वर्षो मे कम विकसित देशों से प्रति व्यक्ति उपभोग का दोगुना हो जाना बहुत ही औसत स्तर के आर्थिक विकास के संगत होगा। लेकिन, पूर्वानुमानित जनसंख्या वृद्धि के साथ मिलकर इससे वि व के ऊर्जा उपभोग में दो से तीन गुना वृद्धि हो जाएगी।

मांग में वास्तविक वृद्धि इससे भी अधिक जाने की उम्मीद है। उदाहरण के लिए, विकसित और विकासशील देशों दोनों में ही आर्थिक वृद्ध होने से मांग बढ़ जाएगी। ऊर्जा उपयोग की क्षमता भी निश्चित रूप से बढ़ेगी, लेकिन मांग में संभावित वृद्धि को देखते हुए इसका अपेक्षाकृत कम होगा (चित्र 7.15)।

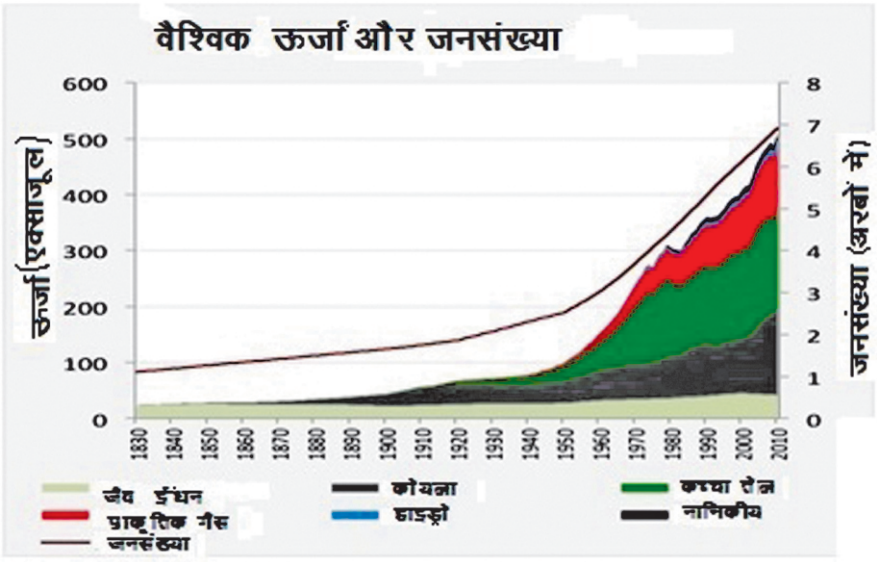


चित्र 7.15 : **2100 में विश्व जनसंख्या और वैश्विक प्राथमिक ऊर्जा उपयोग के अनुमान ध्यान दीजिए कि वर्तमान में विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 9 gtoe ऊर्जा का उपभोग होता है।**

जी.डी.पी. : यह किसी विशेष अवधि में उत्पन्न सभी माल और सेवाओं की कुल अमेरिकन डालर की कीमत को दिखाता है।

यह एक प्राथमिक सूचक होता है जिसका उपयोग देश की अर्थव्यवस्था की स्वास्थ्य का माप करना होगा।

## 7.4.2 औद्योगिकीकरण में ऊर्जा मांग

आर्थिक वृद्धि के आरंभिक चरणों में कुल उत्पादन में कृषि का भाग कम और उद्योग का भाग बढ़ा है। यह विकास की औद्योगिकीकरण प्रावस्था है। विकास के अगले चरणों में, सेवाओं के लिए मांग तेजी से बढ़ने लगी, जिससे उसका GDP ( सकल घेरलू उत्पाद) का भाग बढ़ गया। इसके बाद वाले चरण को अवसर औद्योगिकीकरण पश्चात् समाज कहा जाता है।

भारी उद्योग की वृद्धि (अवसंरचना विकास) के काल में ऊर्जा उपभोग में अत्यधिक वृद्धि हुई। उसी के अनुसार, GDP की ऊर्जा प्रबलता (जिसे प्रति डॉलर GDP के लिए ऊर्जा निवेश के रूप में परिभाषित किया जाता है) बढ़ गई। विकास के जारी रहने के साथ, वित्तीय सेवाओं, संचार, परिवहन और उपभोक्ता वस्तुओं (हल्के निर्माण कार्य) के लिए मांग में तेजी से वृद्धि हुई। इसके परिणामस्वरूप, सेवाओं और उपभोक्ता वस्तुओं का भाग बढ़ गया, जो अंततः कुल उत्पादन के आधे से भी अधिक हो गया है। हल्के उद्योग (जो उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन में सम्मिलित है) और सेवाओं को प्रति इकाई उत्पादन के लिए भारी उद्योग की तुलना में कम ऊर्जा निवेश की आव यकता होती है। इससे समग्र ऊर्जा प्रबलता अर्थात् प्रति इकाई उत्पादन ऊर्जा निवेश में कमी आती है (चित्र 7.16)।

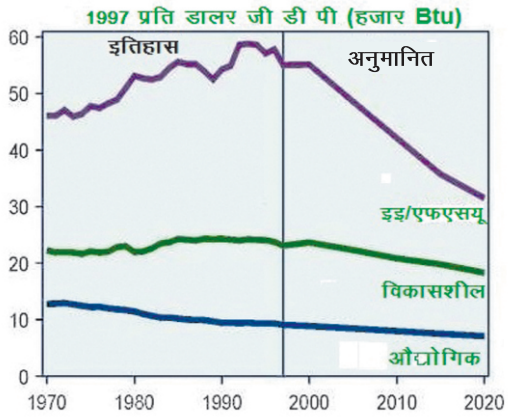


**चित्र 7.16 : क्षेत्रानुसार विश्व ऊर्जा प्रबलता : 1970–2020।**

यद्यपि आर्थिक विकास से औद्योगिक क्षेत्र में प्रति व्यक्ति ऊर्जा मांग की वृद्धि दरें कम हुई हैं, लेकिन परिवहन, आवास और व्यावसायिक क्षेत्रों में ऊर्जा की मांग में काफी वृद्धि हुई है।

**चित्र 7.17 : विकसित देशों में ऊर्जा उपयोग का प्रदर्शन।**

अंतिम उपयोग ऊर्जा मांग पर आर्थिक विकास के प्रभाव के नवीनतम अध्ययन में (चित्र 7.17), ये पाया गया था कि **व्यापक रूप से परिभाषित विभिन्न अंत उपयोग क्षेत्रों में (औद्योगिक, परिवहन, आवासीय और व्यावसायिक) ऊर्जा की मांग विभिन्न दरों से बढ़ती है।** विषे ारूप से, ये पाया गया था कि प्रति व्यक्ति औद्योगिक ऊर्जा मांग विकास के आरंभ में बहुत तेजी से बढ़ी थी जिसमें अधिकतम ऊर्जा उपयोग होता था। यद्यपि, उद्योग में ऊर्जा मांग की व द्धि जल्दी ही कम हो गई और अन्य क्षेत्रों में ऊर्जा उपयोग ने अंततः कुल अंत उपयोग ऊर्जा उपभोग का अधिकांश भाग ले लिया। वास्तव में, परिवहन के क्षेत्र में ऊर्जा की मांग विकास की औद्योगिकीकरण पश्चात् प्रावस्था में भी काफी बढ़ती रही, जो कुल ऊर्जा उपयोग के आधे से भी अधिक थी। एक औसत देश के लिए इन परिणामों के आध ाार पर क्षेत्र अनुसार ऊर्जा मांग की नकल को चित्र 7.18 में प्रदर्शित किया गया है।

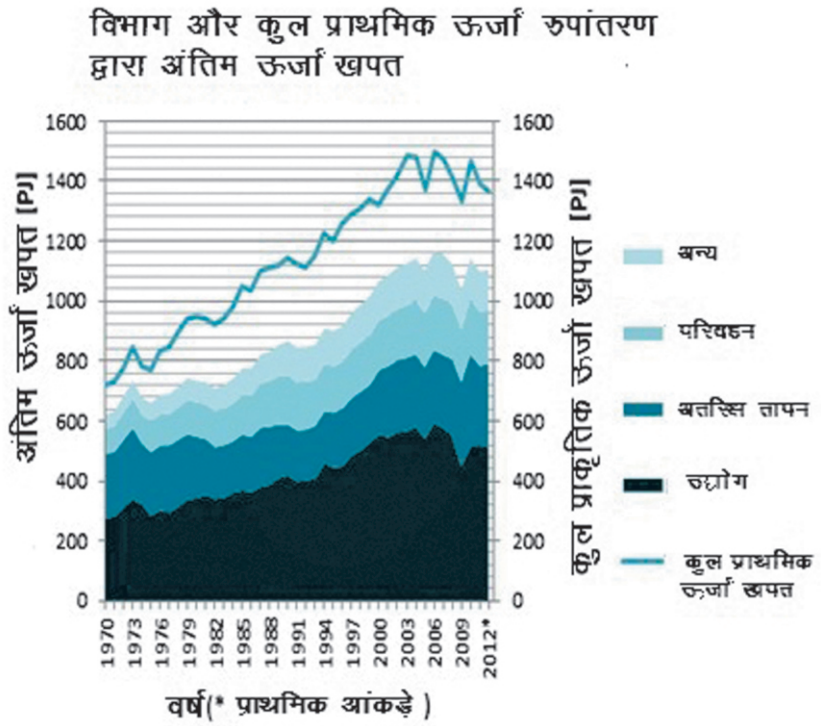


चित्र 7.18: प्रति व्यक्ति अंत–उपयोग ऊर्जा मांग का अनुरूपण।

## 7.4.3 एशियाई विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में ऊर्जा मांग

विकासशील देश विश्व ऊर्जा बाजारों में निरंतर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं और उनका व्यावसायिक ऊर्जा का उपभोग पिछले दो दशकों में काफी बढ़ा है। ये वृद्धि विशेषरूप से पूर्व एशिया और दक्षिण पूर्व एशिया के विकासशील देशों में अधिक है और इसके अगली शताब्दी में जारी रहने की उम्मीद है। यद्यपि इन निम्न–मध्य आय देशों द्वारा भावी ऊर्जा मांग की मात्रा अनेक कारकों पर निर्भर करेगी, जैसे कि :

- अनुमानित आय के स्तर
- वास्तविक ऊर्जा मूल्य
- पारंपरिक गैर–व्यावसायिक ऊर्जा स्रोतो से हटकर व्यावसायिक ईंधनों की ओर अभिमुख होने की बढ़ती प्रवृत्ति
- शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण ऊर्जा व्यय वाले कार्यकलापों की ओर स्थानांतरण की गति, अधिक वाहनों का प्रयोग और अधिक घरेलू ऊर्जा उपकरणों का उपयोग।

पर्यावरण और पर्यावरणीय समस्याओं की वैश्विक प्रकृति के विषय में बढ़ते सरोकार ने विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ती ऊर्जा मांग के पैटर्न और प्रवृत्ति पर ध्यान केन्द्रित किया है। कुल कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन का आधे से भी अधिक ऊर्जा क्षेत्र से उत्पन्न होता है और भविष्य में उत्सर्जनों के प्रवाह का बड़ा और बढ़ता भाग निम्न–मध्य–आय वाले देशों से होगा। प्रमुख कोयला उत्पादक देशों जैसे चीन और भारत में ऊर्जा की मांग और अन्तर–ईधन विकल्पों की संभावनाओं का विस्तृत विश्लेषण बहुत महत्वपूर्ण है। यह वैश्विक पर्यावरणीय समस्याओं और इन देशों की ऊर्जा की मांगों की बेहतर समझ के लिए आव यक है।

### बोध प्रश्न 3

1950 के दशक से अब तक की ऊर्जा उपभोग की प्रवृत्तियों पर चर्चा कीजिए। जनसंख्या में वृद्धि किस प्रकार इन प्रवृत्तियों को प्रभावित करती है?

## 7.5 भावी ऊर्जा आवश्कताएं और संरक्षण

ऊर्जा औद्योगिक विकास के लिए अनिवार्य निवेश हैं। ऊर्जा का उत्पादन व्यावसायिक स्रोतों जैसे कोयला, पेट्रोलियम, जलविद्युत/हाइड्रोइलैक्ट्रिक योजनाओ के साथ ही गैर–व्यावसायिक स्रोतों जैसे गोबर, जलाने की लकड़ी और कृषि अपशिष्ट से भी होता हैं। व्यावसायिक ऊर्जा के प्रतिव्यक्ति उपभोग का उपयोग कभी–कभी किसी देश द्वारा अर्जित आर्थिक विकास के सूचक के रूप में भी किया जाता है। भारत का प्रति व्यक्ति व्यावसायिक ऊर्जा उपभोग यद्यपि, बहुत कम है, यह विश्व औसत का सिर्फ एक बटे आठवां भाग है। व्यावसायिक ऊर्जा देश में उपयोग की जाने वाली कुल ऊर्जा के आधे से थोड़ा अधिक है, शेष गैर व्यावसायिक क्षेत्र से आता है। व्यावसायिक ऊर्जा में उपभोग से कृषि का भाग पिछले ढाई दशक में तेजी से बढ़ा है। 1985–86 में, देश में उद्योगों ने विद्युत ऊर्जा के 62 प्रतिशत और कोयले के 78 प्रतिशत भाग का उपभोग किया है। परिवहन क्षेत्र ने वर्ष 1989 के काल में कुछ तेल उपभोग के 56 प्रतिशत का उपयोग किया था। इन क्षेत्रों के साथ ही घरेलू क्षेत्र में भी ऊर्जा उपभोग तेजी से बढ़ रहा है। इसलिए ऊर्जा कार्यनीति को न सिर्फ देशी उपलब्धता में वृद्धि की योजना बनानी है बल्कि इसका उद्देश्य उसके प्रभावी उपयोग का भी है।

### 7.5.1 संरक्षण और ऊर्जा

ऊर्जा उत्पादन और पर्यावरण संरक्षण दो ऐसे मुद्दे हैं जो मनुष्य द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की परस्परक्रिया से उठते हैं।

बिजली उत्पादन के लिए कोयला और तेल के अत्यधिक उपयोग ने अम्ल वर्षा, और वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड के बढ़ते स्तर जैसी अनेक समस्याएं उत्पन्न की हैं।

विशाल बांध भारत जैसे बिजली की कमी वाले विकासशील देशों में आर्थिक विकास में काफी योगदान दे सकते हैं लेकिन किसी भी बड़े स्तर के विद्युत उत्पादन विकल्प की भांति ही इसमें भी कुछ विवाद हैं। जलाशय वनों, खेतों और वन्यजीव आवासों को जलमग्न कर देते और स्थानीय जनों के समूचे समुदायों को विस्थापित कर देते हैं।

देश की ऊर्जा आवश्यकताओं का उत्तर सिर्फ गैर–पारंपरिक ऊर्जा के स्रोतों को अपनाने में निहित है। भारत सरकार द्वारा एक शुरुआत की गई है कि वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों को विकसित करने के लिए उसी प्रकार की सहायता और संसाधन प्रदान किए जाएं, जैसे अभी तक पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के विकास के लिए दिए जाते रहे हैं।

आगामी अनुभागों में हम पारंपरिक ग्रामीण कृषि प्रोद्यौगिकियों के दायरे में नवाचारी और कल्पनाशील विकल्पों के द्वारा ऊर्जा संरक्षण के कुछ महत्वपूर्ण साधनों के विषय में अध्ययन करेंगे।

## 7.5.3 अ–प्रदूषणकारी ऊर्जा तंत्रों का विकास

### I) चूल्हा में सुधार

वकासशील देशों जैसे भारत में, ग्रामीण गरीबजनों को ऊर्जा की आवश्यकता अधिकतर ईंधन की लकड़ी जलाकर पूरी होती है। खाना पकाने के पारंपरिक तरीके, पकाने वाले के लिए अत्यधिक अस्वास्थ्यकर होते हैं क्योंकि इनसे बहुत सारा धुंआ निकलता हैं। साथ ही जलाने पर निकलने वाले ताप का भी उचित उपयोग नहीं हो पाता है। भारतीय ऊर्जा विज्ञानियों ने धुंआरहित चूल्हें बनाए हैं (चित्र 7.19) जो विशेषरूप से भारतीय स्थितियों के अनुकूल है। ये 'चूल्हा' धुंआरहित होते हैं जिनमें पकाने में कम समय लगता है और ईंधन की बचत भी होती है।

चित्र 7.19 : धुंआरहित चूल्हा।

इन बेहतर चूल्हों को सभी संबंन्धितजनों से अत्यधिक अच्छी और सकारात्मक प्रतिक्रिया मिली है। लगभग 3000 गांव इस अर्थ में 'धुंआविहीन' हो गए हैं कि इन घरों में प्रत्येक घर में, या तो बेहतर 'चूल्हा' अथवा बायोगैस संयंत्र का उपयोग खाना पकाने के लिए किया जाता है। 50,000 व्यक्तियों से अधिक का प्रशिक्षित कार्यबल, जिनमें मुख्य रूप से महिलाएं हैं, को बेहतर चूल्हे बनाने के लिए मुख्य शिल्पकारों के रूप में नियुक्त किया गया था।

### II) शहरी वाहित मल (सीवेज) से ऊर्जा

शहरी वाहित मल (सीवेज) उपचार संयंत्र मानव मल/मूत्र से मीथेन गैस के निष्कर्षण के लिए जो आपंक (sludge) के रूप में होता है, अवायुजीवी पाचन इकाईयों का उपयोग करते हैं। आपंक से उत्पादित होने वाली गैस आपंक गैस कहलाती है, जिसमें बायोगैस की भांति बड़ी मात्रा में मीथेन होती है। अ-पारंपरिक ऊर्जा स्रोत विभाग ने उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और दिल्ली में सीवेज आधारित बायोगैस संयंत्र स्थापित करने में सहायता की है।

एक बड़े शहरी अपशिष्ट पुर्नचक्रण संयंत्र का प्रचालन ओखला, दिल्ली में पहले से ही किया जा रहा है। संयंत्र में 15 डाइजेस्टर हैं जो 15 गैस संग्राहकों से जुड़े हैं। संयंत्र से होने वाला गैस का कुल उत्पादन लगभग 6 लाख घन फुट प्रतिदिन का है जिसका तापमूल्य 700-800 ' BTU ' प्रतिघन फुट है (500-570 कैलोरी प्रति घनमीटर के समतुल्य)। इस गैस की चार किलोमीटर क्षेत्र के दायरे में लगभग 800 परिवारों को आपूर्ति की जाती है। यह गैस LPG गैस से लगभग 50 प्रतिशत सस्ती होती है। एक अन्य ऐसी परियोजना को हाल ही में उत्तर प्रदेश में पंडरोना में

लगाया गया है। ऐसे संयंत्र यू.पी. में अयोध्या, दिल्ली में ईशाओपुर, और मध्य प्रदेश के भोपाल में निर्माणाधीन है, जबलपुर में, नगर निगम एक कचरा–आधारित संयंत्र स्थापित कर रहा हे जिसमें प्रतिदिन 7 मेगावाट (MW) बिजली का उत्पादन होगा।

भारत में डिस्टिलरी (शराब कारखानों) से सहउत्पाद के रूप में अनेक जैवकार्बनिक अपशिष्ट निकलते हैं। देश में पहली बार गुजरात की एक डिस्टिलरी द्वारा अपशिष्ट पुर्नचक्रण और निस्तारण के लिए एक नई तकनीक विकसित की गई है। इस प्रोद्यौगिकी में, 45,000 लीटर अपशिष्ट के उपचार के साथ ही 10 टन कोयले द्वारा एक दिन में प्रदान की जाने वाली ऊर्जा के समतुल्य ऊर्जा का उत्पादन भी होगा। अपशिष्ट से ईंधन का उत्पादन, भस्म का उपयुक्त संवर्धन माध्यम में यीस्ट के साथ किण्वन (fermentation) करके किया जाता है। 1 करोड़ लीटर क्षमता की डिस्टिलरी को अपनी 50 प्रतिशत ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति अपने अपशिष्ट के पुर्नचक्रण से हो सकती है। यदि देश की सभी 150 डिस्टिलरी इस प्रोद्यौगिकी को अपना लें तो वार्षिकरूप से 30 करोड़ रूपये अथवा 5,00000 टन कोयले की बचत हो सकती है। इससे अपशिष्टों का पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित निस्तारण भी हो सकेगा।

III) **सौर ऊर्जा** : बायोगैस एक सस्ता और प्रभावी ईंधन है और इसका फीडस्टॉक (feedstock) नवीकरणीय है। हाल ही में, ऊर्जा उत्पादन के अन्य नवीकरणीय स्रोतों का भी पता लगाया गया है। हमारे ग्रामीण निर्धनजनों की मांगों को पूरा करने के लिए सौर ऊर्जा के दोहन के क्रमबद्ध प्रयास किए जा रहे हैं। यह एक विकेन्द्रीकृत ऊर्जा प्रणाली है, जिसका उपयोग भारतीय जनता की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया जा सकता है। सौर ऊर्जा से खाना पकाना, पानी गर्म करना, पानी का विलवणीकरण, स्थान को गर्म करना, फसल को सुखाना आदि तापीय रूपांतरण के कुछ तरीके हैं। उच्च तापमान उपयोगों के लिए सस्ते सौर संग्राहक विकसित करने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। देश में 380 से अधिक सौर ऊर्जा चालित पानी गर्म करने के संयंत्र प्रचालन में हैं। 1000 से अधिक बड़ी क्षमता वाले जल तापन तंत्रों का संस्थापन होने वाला है।

सौर ऊर्जा को वैद्युत ऊर्जा में भी परिवर्तित किया जा सकता है। सौर पैनल बड़ी मात्रा में प्रकाश ऊर्जा को फोटोवोल्टाइक सेलों पर संकेन्द्रित करते हैं जो बैटरियों को चार्ज करती हैं, और जो बिजली के स्रोत के रूप में काम करती हैं। इस बिजली का उपयोग पंप चलाने, सडकों की लाइट जलाने अथवा फ्रिज चलाने के लिए भी किया जा सकता है। 160 से अधिक सौर फोटोवोल्टाइक पंप ग्रामीण इलाकों में संस्थापित किए गए हैं जिससे वहाँ पीने और सिंचाई के लिए पानी प्रदान किया जा सके। सौर चालित फोटोवोल्टाइक सड़क प्रकाश व्यवस्था प्रणालियों को भारत सरकार द्वारा 150 से अधिक गांवो में परीक्षणात्मक आधार पर प्रदान किया गया है। ये तंत्र सुदूर गांवों में संस्थापित किए गए हैं,जिन्हें ऊर्जाग्राम भी कहते हैं, ये गांव बिजली की लाइनों से काफी दूर हैं, यहाँ सौर ऊर्जा से उन लोगों के लिए बिजली उपलब्ध हो रही है जो अन्यथा ताप या हाइडल विद्युत ऊर्जा का सपना भी नहीं देख सकते थे।

IV) **पवन ऊर्जा** : नवीकरणीय वैकल्पिक ऊर्जा का एक अन्य स्रोत पवन ऊर्जा है। पवन ऊर्जा क्रमबद्ध उपयोग के लिए विश्वसनीय है। अधिकतम दोहन क्षमता का आकलन लगभग $3.2 \times 10^8$ जूल/वर्ष का है। इसे यांत्रिक और वैद्युत ऊर्जाओं में

परिवर्तित किया जा सकता है और यह विशेषरूप से सुदूर क्षेत्रों में उपयोगी हो सकता है। पवन ऊर्जा से टरबाइन चलाकर बिजली का उत्पादन किया जा सकता है। भारतीय मौसमविज्ञान के अनुसार प्रायद्वीपीय और मध्य भारत में अनेक स्थानों पर 3kwh/$m^2$/दिन (किलोवाटघंटा प्रति वर्गमीटर प्रतिदिन) का औसत वार्षिक पवन घनत्व पाया जाता है। कुछ क्षेत्रों में, सर्दियेां में ये घनत्व 10kwh/$m^2$/ दिन से अधिक का हो जाता है क्योंकि तब ऊर्जा की आवश्यकता बहुत अधिक होती है और यह 4kwh/$m^2$/दिन का वर्ष मे 5–7 महीने रहता है। वर्तमान में इस ऊर्जा का उपयोग अजमेर, राजस्थान में चार स्थानों पर भूजल को पंप करने के लिए किया जा रहा है। DNES ने देशभर में 924 पवन ऊर्जा चालित(विंड) पंप लगाए हैं। उपयुक्त स्थानों (जैसे लद्दाख) पर पवन ऊर्जा जेनरेटरों का विचार किया जा रहा है जिनकी कुल क्षमता 2MW (मैगावाट) होगी, जो प्रकाश व्यवस्था और पानी को पंप करने के लिए बैटरियों को चार्ज करने की युक्तियों में भी काम करेंगे (सारणी 7. 2)। आठवीं योजना में, भारत में विभिन्न स्थानों पर 85 नई पवन–चालित मिलें लगाने का प्रस्ताव है, जहाँ स्थान की वायुगतिकी (aerodynamics) इस उद्यम के लिए उपयुक्त स्थितियां प्रदान करेगी।

आज देश मे 100 से अधिक निर्माता विभिन्न नवीकरणीय ऊर्जा प्रणालियों और युक्तियों के उत्पादन और विकास में संलग्न हैं। ये आकलन है कि इस शताब्दी के अंत तक, कुल ऊर्जा मांग का 20 प्रतिशत भाग निम्नलिखित गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों द्वारा पूरा किया जाएगा।

आपने विभिन्न गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के अध्ययन से क्या समझा है ये जानने के लिए निम्नलिखित बोध प्रश्नों को हल कीजिए। अपने उत्तरों का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

## बोध प्रश्न 4

a) व्यावसायिक और गैर–व्यावसायिक ऊर्जा स्रोतों में क्या अन्तर है?

b) बताइए कि निम्नलिखित वाक्य सत्य है अथवा असत्य है। दिए गए बाक्स में (✓) या (✗) का चिन्ह लगाकर अपने उत्तर को इंगित कीजिए।

i) शहर के सीवेज का प्रयोग बायोगैस के उत्पादन के लिए नहीं किया जा सकता है। ( )

ii) धुंआरहित चूल्हा ईंधन की बचत के साथ कम समय में खाने को पकाते हैं। ( )

iii) गोबर गैस अथवा बायोगैस का उपयोग खाना पकाने, प्रकाश व्यवस्था और फ्रिज या ट्यूबवेल पंप चलाने के लिए बिजली उत्पादन करने के लिए किया जा सकता है। ( )

iv) ऊर्जाग्राम ऐसे विशेष गांव है जिनमें गैर–पारंपरिक वैकल्पिक ऊर्जा उत्पादन प्रणालियों को सरकार द्वारा परीक्षात्मक आधार पर स्थापित किया गया है। ( )

a) ऊर्जा उत्पादन की पारंपरिक और वैकल्पिक प्रणलियों के बीच समानताएं और अन्तर बताइए।

## 7.6 सारांश

आइए अब हम संक्षेप में दोहराते हैं कि अभी तक हमने क्या पढ़ा है :

- आज के आधुनिक औद्योगिक समाजों की पहचान ऊर्जा के सघन उपयोग द्वारा होती है। आप बिजली अथवा ऊर्जा के अन्य स्रोतों के बगैर जीवन की कल्पना नहीं कर सकते हैं।
- भारत विश्व की कुल ऊर्जा के लगभग 3 प्रतिशत भाग का उपयोग करता है।
- प्रमुख रूप से ऊर्जा के तीन स्रोत हैं i) गैर–पारंपरिक, नवीकरणीय स्रोत जैसे– बायोमास ऊर्जा, सौर ऊर्जा; फ्यूल सेल ऊर्जा, जलविद्युत (हाइड्रोपावर) ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, सह–उत्पादन ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ii) पारंपरिक ऊर्जा स्रोत जैसे प्राक तिक तेल ऊर्जा, गैस ऊर्जा, कोयला ऊर्जा तथा iii) परमाणु ऊर्जा।
- प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष उपयोग की जाने वाली ऊर्जा की मात्रा जीवनस्तर को मापने का एक उपयोगी पैमाना है।
- विकासशील देशों की ऊर्जा की मांग जनसंख्या वृद्धि और औद्योगिकीकरण के कारण बढ़ रही है।
- नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत वस्तुतः अक्षत हैं, ये न्यूनतम प्रदूषण करते हैं, इनसे कोई तेल अधिप्लाव (Oil spill), नाभिकीय अवगलन (nuclear meltdown), नाभिकीय जल, धुंध या अम्लवर्षा नही होती है। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की कोई ईंधन लागत नहीं होती है और ये असानी से उपलब्ध है।
- स्वच्छ, नवीकरणीय ऊर्जा को अपनाने से हमें अधिक स्वच्छ वायु और जल मिलेंगे, और मानव स्वास्थ्य के बेहतर होने के साथ ही ऊर्जा सुरक्षा भी बढ़ेगी।
- ऊर्जा स्रोतो का संरक्षण अत्यधिक आवश्यक है क्योंकि इनका अत्यधिक उपभोग न सिर्फ महंगा है बल्कि इससे अनेक समस्याएं भी पैदा होती हैं। यही नहीं, नवाचारी और गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता ही आधुनिक मानव के लिए एक मात्र विकल्प बन गया है।

## 7.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. ऊर्जा के पारंपरिक और अ–पारंपरिक स्रोतों के बीच क्या अन्तर हैं?
2. बायोगैस किसप्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले मनुष्यों के ऊर्जा संकट को पूरा करने में सहायक हैं?
3. ऊर्जा उत्पादन के किन्हीं दो गैर–पारंपरिक साधनों की चर्चा कीजिए।

## 7.8 उत्तर

### बोध प्रश्न

**बोध प्रश्न 1**

1. (i) a, (ii) b, (iii) c, (iv) e, (v) d

**बोध प्रश्न 2**

2. (a) अधिकतम (b) ऊर्जा (c) अधिक (d) दीर्घकालिक

**बोध प्रश्न 3**

3. अनुभाग 7.4 में देखिए।

**बोध प्रश्न 4**

4. (a) ऊर्जा के वे स्रोत जिनका उत्पादन व्यापक स्तर पर बिक्री के उद्देश्य से किया जाता है, वे **व्यावसायिक** कहलाते हैं जैसे कोयला, पेट्रोलियम, बिजली। वे स्रोत जो सिर्फ स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं और जिनका व्यापक स्तर पर उत्पादन नहीं किया जाता है **अ–व्यावसायिक** स्रोत कहलाते हैं, जैसे जलाने की लकड़ी, गोबर और कृषि अपशिष्ट।

(b) (i) × (ii) ✓ (iii) ✓ (iv) ✓

(c) ऊर्जा उत्पादन की पारंपरिक प्रणालियां कम प्रभावी, अधिक प्रदूषणकारी और अ–नवीकरणीय हैं जबकि ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत नवाचारी हैं और नवीकरणीय संसाधनों के उपयोग द्वारा ऊर्जा उत्पादन के स्वच्छ और प्रभावी साधन प्रदान कर रहे हैं।

### अंत में कुछ प्रश्न

(1) ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत जैसे कोयला, पेट्रोलियम, अ–नवीकरणीय हैं। ये पुरानी प्रोद्यौगियों का ऊर्जा उत्पादन के लिए उपयोग करते हैं और पर्यावरण को क्षति पहुंचाते हैं। गैर–पारंपरिक ऊर्जास्रोत जैसे सौर ऊर्जा, बायोमास से ऊर्जा, नवीकरणीय संसाधनों पर आधारित हैं। ये अपेक्षाकृत नवीन प्रोद्यौगिकियों का उपयेाग करते हैं और पर्यावरण को कम से कम हानि पहुंचाते हैं। गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत सुदूर क्षेत्रों में स्थित ग्रामीणजनों के लिए ऊर्जा उपलब्ध कराने के विकेन्द्रीकृत साधन हैं।

(2) अनुभाग 7.2 में देखिए।

(3) ऊर्जा उत्पादन की दो गैर–पारंपरिक विधियां हैं (a) सोलर सेल द्वारा बिजली उत्पादन, और (b) पवन ऊर्जा द्वारा बिजली का उत्पादन। पहले मामले में, सौर पैनल सौर विकिरण को संग्रहीत करके उसे फोटोवोल्टाइक सेल पर परावर्तित करते हैं, जो चार्ज हो जाते हैं और सेल की बैटरी में उपयोग किए जा सकते हैं। पवन ऊर्जा में पवन के बल का उपयोग मोटर को घुमाने के लिए किया जाता है जो बिजली का उत्पादन करती है।

## 7.9 अन्य संदर्भ पाठ्य सामग्री

1. Bharucha, E. (2005) *Textbook of Environmental Studies for Undergraduate Courses,* Hyderabad: Universities Press (India) Private Limited.
2. Botkin, D. B. &Keler, E. A. 8th Ed, (2011) *Environmental Science, Earth as a Living Planet*, New Delhi: Wiley India Pvt. Ltd.
3. Kaushik, A. 2nd Ed. (2004) *Environmental Studies*, New Delhi: New Age International (P) Limited.
4. Rajagopalan, R. 3rd Ed. (2015) *Environmental Studies*, New Delhi: Oxford University Press.
5. Wright, R. T. (2008) *Environmental Science: Towards a Sustainable Future* New Delhi: PHL Learning Private Ltd.

### Acknowledgement

1. Fig. 7.1: Biomass gasifier.

   (Source: https://i.ytimg.com/vi/837XxbF4_ss/hqdefault.jpg)
2. Fig. 7.10: Use of renewable energy as wind pump.

   https://en.wikipedia.org/wiki/File:Turbines-thar-india.jpg
3. Fig. 7.12: Hydro Power. (Source: http://www2.emersonprocess.com/SiteCollectionImages /News%20Images/Agua%20Verm080.jpg)
4. Fig. 7.13: A view of atomic power station. (Source: http://www.power-eng.com/content/dam/Pennenergy/online-articles/2013/February /Sequoyah-Nuclear-Plant.jpg)(Source: http://seco.cpa.state.tx.us/images/manure-biogas.gif)
5. Fig. 7.14: Energy consumption in selected Asian countries 1980-2001.

   (Source: http://cdn0.wn.com/o25/ar/i/aa/d36e6ebee51ddd.jpg)
6. Fig. 7.15: World population and global primary energy use projections to 2100. Notice that at present the world uses roughly 9 gtoe worth of energy per year. (Source: http://www.euanmearns.com/wp-content/uploads / 2014/07/world_energy_population.png)
7. Fig. 7.16: World energy intensity by region 1970-2020.(Source: http:// web.fc2 .com/jump/?url=http://oilpeak.web.fc2.com/myenvironmentalism/ technology /ieo2000/figure-11.jpg)
8. Fig. 7.17: An illustration of energy consumption in the developed world Source:https://pixabay.com/photos/hong-kong-city-urban-skyscrapers-1990268/